मीरा एण्ड दी महात्मा के हिन्दी अनुवाद की अंर्तवस्तु और शिल्प का आलोचनात्मक अध्ययन

A CRITICAL STUDY OF CONTENT AND FORM OF THE HINDI TRANSLATION OF 'MIRA AND THE MAHATMA'

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय की एम.फिल (हिन्दी अनुवाद) की उपाधि हेतु प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध

शोध निर्देशक

डॉ.रमण प्रसाद सिन्हा

शोधार्थी

स्वाति डाँगी

भारतीय भाषा केन्द्र

भाषा,साहित्य एवं संस्कृति अध्ययन संस्थान

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय

नई दिल्ली -110067

2013

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
भारतीय भाषा केन्द्र
भाषा,साहित्य एवं संस्कृति अध्ययन संस्थान
नई दिल्ली -110067

Centre of Indian languages

Date : 29.07.2013

DECLARATION

I hereby declare that the work done in this M.Phil Dissertation entitle "*MIRA AND THE MAHATMA* KE HINDI ANUVAAD KI ANTARVASTU AUR SHILP KA ALOCHNATMAK ADHYYAN" (A CRITICAL STUDY OF CONTENT AND FORM OF THE HINDI TRANSLATION OF MIRA AND THE MAHATMA) by me is the original research work and it has not been previously submitted for any other degree in this or any other University/Institution.

SWATI DANGI
(Research Scholar)

DR. RAMAN PRASAD SINHA
(Supervisor)
CENTRE OF INDIAN LANGUAGES
SCHOOLOF LANGUAGE
JAWAHARLAL NEHRU UNIVERSITY
NEW DELHI-110067

PROF.RAMBUXJAT
(Chairperson)
CENTRE OF INDIAN LANGUAGES
SCHOOLOF LANGUAGE
JAWAHARLAL NEHRU UNIVERSITY
NEW DELHI-110067

माता-पिता

और

ईश्वर को समर्पित

अनुक्रम

भूमिका

प्रथम अध्याय

उपन्यास का देशकाल और भारत का तत्कालीन परिदृश्य 1-42

क)1907-1922 6-19

ख)1923-1942 20-42

द्वितीय अध्याय

अनुवाद की दृष्टि से मीरा और महात्मा : अंतर्वस्तु 43-73

तृतीय अध्याय

अनुवाद की दृष्टि से मीरा और महात्मा : शिल्प 74-119

क)भाषा 76-97

ख)बिम्बऔरप्रतीक 98-106

ग)शैली 107-119

उपसंहार

ग्रन्थ सूची

भूमिका

लेखक अपनी प्रत्यक्ष और परोक्ष भावानुभूतियों की अभिव्यक्ति साहित्य सृजन में करता है। संवेदनशील हृदय और रचनात्मक बुद्धि के सामंजस्य से लेखक समाज का विश्लेषण करता है। इसी चिंतनशील प्रक्रिया के ताने-बाने जोड़ कर वह अपने विचारों को लेखिबध भी करता है। समकालीन इतिहास के लिए पनपने वाली अपनी इसी विचारधारा को कल्पना के साथ एकसूत्र में बाँधकर लेखक सुधीर कक्कड़ ने 'मीरा एंड दी महात्मा' की रचना की है। इस उपन्यास को लेखक ने वर्ष 2004 में रचा था। लेखक सामान्य तौर पर भारत में मनोविश्लेषणवाद के पिता माने जाते हैं। अपने 36 वर्षों के अभ्यास के दौरान प्रशंसनीय मनोविश्लेषक सुधीर कक्कड़ ने स्त्री-पुरुष के मनोभावों के सैंकड़ों अध्ययन किये हैं।

उपन्यास की कथा में लेखक ने मीरा और महात्मा गाँधी के अप्रतिबंधित प्रेम को आधार बनाया है। कथा की केन्द्रीय पात्र मेडलिन स्लेड (मीरा) एक ब्रिटिश एडमिरल की बेटी है। महात्मा गाँधी के जीवन सिद्धांतों से प्रभावित होकर वह भारत आती है। साबरमती आश्रम पहुंचकर बापू से मिलने के बाद वह अपना जीवन उनकी और भारत देश की सेवा में समर्पित करने का फैसला करती है। महात्मा गाँधी के सामाजिक दायित्व के कारण उनका मीरा के प्रेम को न स्वीकार पाना अनेक घटनाओं और दृश्यों से उपन्यास में उद्घाटित हुआ है। एक ओर जहाँ प्रेम के लिए मीरा आजीवन संघर्ष करती है वहीं दूसरी ओर ब्रिटिश राज की गुलामी से भारत देश को छुटकारा दिलवाने के लिए बापू भी अपना सब कुछ न्यौछावर कर देते हैं। यह उपन्यास मीरा और महात्मा के अतुलनीय प्रेम और बलिदान की कथा कहता है।

उपन्यास 'मीरा एंड दी महात्मा' का हिन्दी अनुवाद अशोक कुमार ने वर्ष 2005 में किया था।[1] मूल उपन्यास की ही भांति अनुवादक ने भी लेखक की चेतना को अनूदित उपन्यास में वाणी देने की पूरी कोशिश की है। किसी भी रचना की अंतर्वस्तु उसके प्राण होती है। शैली, शिल्प और भाषा को रचना का शरीर कहा जा सकता है। 'मीरा एंड दी महात्मा' के हिन्दी अनुवाद 'मीरा और महात्मा' के इसी प्राण और शरीर को मैंने अपने शोध का विषय बनाया है। 'मीरा और महात्मा' के अंतर्वस्तु और शिल्प को अपने शोध का विषय बनाने का प्रमुख कारण था महात्मा गाँधी के जीवन के एक अनकहे और अनसोचे पहलू और एक ब्रिटिश युवती द्वारा बापू के लिए किये जाने वाले बलिदान को जानना। शिल्प में लेखक के कुछ दिलचस्प प्रयोग कथा की एकसारता को भंग करते भी दिखते हैं।

प्रस्तुत शोध प्रबंध सुविधानुसार तीन अध्यायों में बाँटा गया है –

इसके प्रथम अध्याय में 'उपन्यास के देशकाल और भारत के तत्कालीन परिदृश्य' को दिखाया गया है। इस अध्याय को मैंने दो भागों में विभक्त किया है - प्रथम भाग में भारत के 1907-1922 के इतिहास काल की कुछ चुनी हुई घटनाओं के साथ उपन्यास की कथा का विवरण है। दूसरे भाग में 1923-1942 तक के भारतीय इतिहास में घट रही प्रमुख घटनाओं के साथ ही उपन्यास में आने वाली घटनाएं भी हैं। उपन्यास में वर्णित घटनाएं इतिहास में दर्ज घटनाओं से कितना मेल खाती हैं और कितनी अलग हैं, यही इस अध्याय में दिखाने की कोशिश की गयी है।

शोध प्रबंध का दूसरा अध्याय 'अनूदित उपन्यास की अंतर्वस्तु है', लेखक ने कुछ वास्तविक और कुछ काल्पनिक पात्रों के निजी जीवन में आने वाले उतार-चढ़ाव से उपन्यास की अंतर्वस्तु निर्मित की है। इस अध्याय में मैंने पात्रों को प्रभावित करने वाली घटनाओं का अनुवाद की दृष्टि से तुलनात्मक अध्ययन

---

[1] वरिष्ठ संपादक : इंडिया टुडे

किया है । मूल उपन्यास और अनूदित उपन्यास में आने वाले भावों, विचारों और अन्य तत्वों के बीच कितना अंतर है इसका भाषिक अध्ययन भी है ।

शोध प्रबंध के तीसरे अध्याय में 'अनूदित उपन्यास के शिल्प का अध्ययन है', जिसमें भाषा, बिम्ब व प्रतीक और शैली के आधार पर पाठ को तीन भागों में बांटा गया है । चरित्रों और उनसे जुड़ी घटनाओं का विवरण देने के लिए लेखक ने जिस विशेष भाषा का प्रयोग किया है लक्ष्यभाषा में आने वाले उसी प्रवाह का मैंने भिन्न तत्वों के आधार पर अध्ययन किया है । इतना ही नहीं जिन प्रतीकों और बिम्बों का प्रयोग कर रचना प्रौढ़ बनती है उसे भी इस अध्याय में विशेष स्थान दिया है । हर एक कथाकार की अपनी शैली होती है, उसी शैली को चार तत्वों में विभाजित कर स्रोतभाषा और लक्ष्यभाषा के बीच आने वाली समानता और भिन्नता का विश्लेषण भी इस अध्याय में है ।

यह लघु शोध प्रबंध मैंने अपने शोध निर्देशक डॉ.रमण प्रसाद सिन्हा के निर्देशन में सम्पन्न किया है । सही समय पर मेरी शोध को गलत दिशा में जाने से रोकने के लिए उनका स्नेहपूर्वक सुझाव अत्यंत मूल्यवान सिद्ध हुआ । मेरी शोध में आने वाली उलझनों और बिखराव को उनकी सहायता के बिना व्यवस्थित करना संभव नहीं था । कदम-कदम पर उनका सहयोग और मार्गदर्शन ही मेरे शोध प्रबंध को पूर्ण कर पाया है। प्रस्तुत लघु शोध के निर्देशन एवं मेरे ज्ञानवर्धन में मैं उनकी आजीवन आभारी रहूंगी ।

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के शैक्षणिक परिवेश ने इस शोध प्रबंध की प्रगति में मेरी समझ और मेरे ज्ञान को विकसित किया है । शोध प्रबंध के लिए सम्बंधित सामग्री जुटाने में जे. एन. यू पुस्तकालय और साहित्य अकादेमी पुस्तकालय, नई दिल्ली का विशेष रुप से योगदान रहा है ।

मैं आभारी हूँ अपने स्वर्गीय पिता की जिनकी उम्मीदों के बिना मेरा इस शोध शिक्षण तक पहुंचना असंभव था।

मैं अपनी माँ और पूरे परिवार चाचा-चाची, भाई शिवाँग, शुभ्रा दीदी, शिखा दीदी का विशेष आभार व्यक्त करना चाहूंगी जिनका स्नेह इस उपक्रम में प्रेरणादायी रहा। साथ ही मैं अपने वरिष्ठ छात्रों स्वाति ठाकुर, दिलीप जयसवाल, संदीप जयसवाल विशेष रुप से रमेश सोनी की आभारी हूँ जिन्होंने इस शोध के बीच मेरा ज्ञानवर्धन किया। साथ ही अपने मित्रों जिन्होनें हिम्मत हारने पर मेरा मनोबल बढ़ाया अभिनव झा, अभय कुमार और रूचि श्रीवास्तव की भी आभारी हूँ।

स्वाति डांगी

प्रथम अध्याय

उपन्यास का देशकाल और भारत का तत्कालीन परिदृश्य

प्रथम अध्याय

सुधीर कक्कड़ द्वारा रचित उपन्यास 'मीरा एंड दी महात्मा' का हिन्दी अनुवाद 'मीरा और महात्मा' शीर्षक से अशोक कुमार ने किया है । उपन्यास का देशकाल उस समय का है जब भारत ब्रिटिश शासन का गुलाम था । देश में गरीबी, महामारी और अकाल चारों तरफ फैले हुए थे । ब्रिटिश सरकार अपनी राजनीति के आगे गरम दल या नरम दल के किसी भी नेता की चलने नहीं देती थी । दिन-प्रतिदिन उनके अत्याचार बढ़ते जा रहे थे । सौ वर्षों से भी अधिक ब्रिटिश सरकार की गुलामी सह चुके भारत देश के नागरिक अब उनकी मनमानी से परेशान हो चुके थे और ब्रिटिश सत्ता से छुटकारा पाना चाहते थे । दूसरी ही तरफ ब्रिटिश सरकार ने सोच लिया था कि किसी भी कीमत पर भारत को स्वतंत्रता का सूरज देखने नहीं देगी ।

भारतीय समाज के इतिहास में स्वाधीनता आन्दोलन एक युगांतरकारी घटना है। केवल राजनीतिक ही नहीं सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी भारत देश अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए समान रूप से संघर्षरत रहा है । वर्षों से गुलामी और अत्याचारों के बोझ को ढ़ोते हुए अपने अधिकारों के प्रति आत्मसजग हुए भारतीयों के मन में एक शताब्दी से दबे हुए सवाल उठ खड़े हुए, जिसने स्वाधीनता संग्राम को जन्म दिया । यह स्वाधीनता संग्राम एक अन्वेषक की तरह समाज में लोगों की दबी कुचली हुई आत्मा को जाग्रत करने में सफल रहा । भारतीयों के इस व्यापक जन-समूह के अग्रदूत थे महात्मा गाँधी।

सुधीर कक्कड़ ने उपन्यास में यह स्पष्ट दिखाया है कि भारत गरीबों का देश है । भारत विभिन्नताओं का देश है, जहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के लोग रहते हैं । अलग-अलग प्रदेशों के लोग हैं जो धर्म, जात-पात और भिन्न संस्कृतियों के होने के साथ ही आपस में एकता की धागे से गुंथे हुए हैं । जिन्होंने महात्मा गाँधी के शुद्ध अंतकरण व

बुद्धिमत्ता को देख स्वंतत्रता की मशाल उनके हाथों में थमाई है । महात्मा गाँधी में जनता के विवेक और हृदय का अनुसरण करने की असीम क्षमता है । वे उनके सम्राट ही नहीं, कभी उनके साथी तो कभी पिता समान मार्गदर्शक बनकर साथ चलते हैं ।

उपन्यास में उपन्यासकार ने जिन घटनाओं का उल्लेख किया है वे हैं प्रथम विश्वयुद्ध, सविनय अवज्ञा, भारत छोड़ो आन्दोलन, लखनऊ अधिवेशन, महात्मा गाँधी की गिरफ्तारी, नमक कानून तोड़ो आन्दोलन, गोरखपुर का भाषण, असहयोग आन्दोलन, सिविल नाफ़रमानी, गोल मेज सम्मलेन, कानपुर अधिवेशन, लाहौर में पूर्ण स्वराज की मांग, प्रिंस ऑफ़ वेल्स का काले झंडों से स्वागत, 1914 में सैन फ्रांसिस्को में सरदारों के द्वारा क्रांति ।

लेखक ने यह दिखाया है कि महात्मा गाँधी ने साबरमती आश्रम के दरवाज़े सभी वर्गों एवं वर्णों के लिए खोल रखे हैं । बापू आश्रम में रहने वाले निवासियों को नैतिक ईमानदारी, सत्य, अनुशासन एवं अहिंसात्मक मार्ग पर चलने तथा उनके जीवंत प्रयोग करने की शिक्षा देते हैं । आश्रम में इन तत्वों का प्रयोग कर न केवल मानसिक रूप से ही लोगों को मजबूत करना उनका उद्देश्य है बल्कि एक ऐसे सजग समाज का भी निर्माण करना है जो बिना हथियार उठाये ही अपने शत्रुओं को परास्त कर सके ।

महात्मा गाँधी के इन विचारों से न केवल भारत के ही बल्कि विदेशों के भी बहुत-से लोग प्रभावित हैं, जिनमें से एक है लन्दन में रहने वाली मेडलिन स्लेड और दूसरे यूरोप में रहने वाले रोमारोलां । मेडलिन ने मीरा बनकर अपने 22 वर्ष भारत के स्वतंत्रता संग्राम में समर्पित कर दिए और स्वतंत्रता के बाद भी मीरा अगले 12 वर्षों तक भारत में ही रही । मीरा उपन्यास की अन्य मुख्य पात्रों में से एक हैं । उपन्यास के मुख्य पात्र - महात्मा गाँधी (बापू), मेडलिन स्लेड (मीरा), नवीन (कथाकार) हैं । अन्य गौण पात्रो में रोमारोलां, बा, महादेव भाई, हरेनभाई, भंसाली भाई, विनोवा भावे, लार्ड इरविन, रोहाना, जवाहरलाल नेहरु, विन्स्टन चर्चिल और मेडलिन की आया बर्था भी है।

मीरा उपन्यास की केन्द्रीय पात्र है, जिसके इर्द-गिर्द पूरी कहानी बुनी हुई है । उपन्यास में चित्रित प्रत्येक घटना महात्मा गाँधी से जुड़ी हुई है । उपन्यास की कथा 25 अक्टूबर, 1925 से शुरू होती है जब मेडलिन लन्दन से भारत आने वाले जहाज़ में बैठती है । महात्मा गाँधी के सिद्धांतों से प्रभावित होकर मेडलिन लन्दन छोड़ने का फैसला करती है । लेखक कहता है कि भारत आने से पहले "यद्यपि वे अपने पिछले जीवन से नाता तोड़ लेना चाह रही थीं ।"[1] जिसमें वह सफल भी रही । अपने पिछले जीवन से सारे सम्बन्ध ख़त्म कर मेडलिन नवम्बर 1925 को बम्बई के तट पर पहुंची । मेडलिन जब भारत आयी तो देश में शांति का काल था। उस समय न तो कोई क्रांति हो रही थी और न ही कोई संघर्ष, उस वर्ष महात्मा गाँधी जेल से एक वर्ष की कैद पूरी करके लौटे थे ।

भारत आने पर मेडलिन के जीवन में परिवर्तनों की शुरुआत होती है । जहाज़ से अकेले यात्रा करते हुए मेडलिन को अपना पिछला जीवन याद आता है । इससे पहले भी मीरा एक बार अपने परिवार के साथ भारत में दो वर्षों तक भौतिक रुप से रह चुकी थी । इसका अर्थ यह था कि मीरा भारत में रहती तो थी लेकिन वह भारत के ब्रिटिश शासन से, भारतीयों की गुलामी से और साथ ही भारत के लोगों की गरीबी और सरल व्यवहार से बिल्कुल अनजान थी। मीरा अपनी उम्र के 15 वें वर्ष में परिवार के साथ भारत रहने आयी थी । मीरा के पिता 'ईस्ट इंडीज कम्पनी के कमांडर इन चीफ' के पद पर आसीन थे जिनका तबादला बम्बई में हुआ था । पिता उच्चाधिकारी थे इसलिए मेडलिन के परिवार को एडमिरल का बंगला रहने के लिए मिला था । वह एक महलनुमा बंगला था । जहाँ पर भारतीय मूल के बहुत से नौकर दिन रात ब्रिटिश परिवार की सेवा किया करते थे । मेडलिन को उस समय की कुछ ही बातें याद थीं । लेखक बताता है कि "मेडलिन को उन दो वर्षों के दौरान घरेलू नौकर-चाकरों के अलावा किसी भारतीय

---

[1] मीरा और महात्मा, पृ-10

के करीबी संपर्क की याद नहीं थी ।"[1] मेडलिन को याद थी उस कोचवान की जो बंद बग्घियों में स्लेड परिवार को जमींदारों और राज-परिवारों के यहाँ ले जाया करता था, रसोइया जो खाना पकाता था, गंजा सईस जो घोड़ों की देखभाल करता था, दरजी जो विशेष अवसरों के लिए लन्दन में पहनी जाने वाली फ्रॉक की नक़ल करके उनके कपड़े सिलता था, मसालची जो बंगले में जलने वाली हज़ारों लालटेनों में शाम को तेल भरता था ।

एडमिरल बंगले के बाहर की दीवारों को ब्रिटिश सरकार ने बहुत ऊंचा बनवाया था, इन ऊंची दीवारों को साम्राज्यवादियों ने भारतीयों से सामाजिक दूरी बनाने के लिए खड़ा किया था। लेखक कहता है "उनकी औरतें और बच्चे इस देश को बस उनके गरम मौसम और वनस्पति के जरिए ही जानते थे"[2] ब्रिटिश अधिकारी और उनके परिवार भारत में विलासिता पूर्वक अपना जीवन व्यतीत किया करते थे । अभिजात ब्रिटिश परिवारों में समय-समय पर डिनर पार्टियाँ, डांस पार्टियाँ, भारतीय जमींदारों और राजाओं की पत्नियों के लिए पर्दा पार्टियाँ रखी जाती थीं, जिसके लिए धन भारतीय मुद्राकोष से ही निकाला जाता था ।

1907 से 1909 के ये वे दो वर्ष थे जब मेडलिन अपने परिवार के साथ एडमिरल बंगले में शांति से रह रही थी । दुनिया में घटने वाली घटनाओं और अपने परिवेश में ही भारतीयों पर हो रहे अत्याचारों से अनजान थी । जहाँ एक ओर मेडलिन का व्यस्त जीवन विलासिता से भरा था, वहीं दूसरी ओर 1905 में लार्ड कर्जन द्वारा बंग भंग की घोषणा को दो वर्ष पूरे हो चुके थे । दो वर्ष बाद भी देश में लोगों के बीच बेचैनी फैली हुई थी । इतिहासकारों के अनुसार लार्ड कर्जन ने यह कदम 'फूट डालो और शासन करो' की नीति के तहत उठाया था ।

---

[1] वही : पृ-22

[2] वही : पृ-22

1907-1922

1907-1909

समकालीन भारत के बंग-भंग के सम्बन्ध में 'आधुनिक भारत' में सुमित सरकार के अनुसार 'कर्जन के द्वारा उठाया गया यह सर्वाधिक अलोकप्रिय कदम था । बंगाल प्रेसीडेंसी का विशाल आकार अनेक प्रशासकों के लिए चिंता का विषय बना हुआ था । 1905 तक विभाजन की योजना का विरोध पारंपरिक नरमदलीय उपायों का गहन प्रयोग करके ही किया जाता रहा, लेकिन इन उपायों के पूर्णत: असफल हो जाने पर नई दिशा की खोज आवश्यक थी । अंग्रेज़ों के खिलाफ बगावत करने की योजना बनाई जाने लगी थी, जिसमें ब्रिटिश वस्तुओं, सरकारी शिक्षा, न्याय एवं कार्यकारी प्रशासन के संगठित एवं निर्मम बहिष्कार की बात कही गयी थी । इस नीति में अन्यायपूर्ण कानूनों की सविनय अवज्ञा, राजभक्तों का सामाजिक बहिष्कार और अंग्रेजी दमन की सहन सीमा से आगे बढ़ जाने पर सशस्त्र संघर्ष की योजना भी शामिल थी । बंगाल में साहित्यिक हिंसा और कांग्रेस संगठन के आंतरिक झगड़ों में ही काफी समय व्यर्थ चला गया था । ऐसे में गाँधीवादी रचनात्मक कार्य एवं जन सत्याग्रह भी क्षणिक सिद्ध हुए और 1908 के अंत तक बंगाल की राजनीति पुनःनरमदलीय 'भिखमंगेपन' एवं 'वैयक्तिक आतंकवाद' के दो विरोधी ध्रुवों में सिमट गयी जो परस्पर-असम्बद्ध न थे ।'

ब्रिटिश सरकार की फूट डालो और शासन करो की नीति तब रंग लाने लगी जब उन्होनें यह प्रचार किया कि नया प्रान्त बन जाने से मुसलमानों को नौकरियों के नये अवसर मिलेंगे, उच्च एवं मध्यवर्गीय मुसलमानों को बहकाने में सफल रहा । कर्जन के कार्यों ने पूरे भारत में विशेष रूप से शिक्षित लोगों के बीच आक्रोश उत्पन्न किया था । बंग भंग ने बंगाल के साथ-साथ असम, उड़ीसा और बिहार को भी प्रभावित किया ।

जब मेडलिन परिवार सहित भारत में रहने आयी तब तक हिन्दू-मुस्लिम दंगों की शुरुआत हो चुकी थी । 1908 तक आते-आते स्वदेशी आन्दोलन अपनी ऊर्जा खो चुका था । ब्रिटिश सरकार ने इस कमज़ोर पड़े हुए आन्दोलन का फायदा उठाया और जनसभाओं, प्रेस, प्रदर्शनों को प्रतिबंधित कर दिया । हथकरघा उद्योग भी बहुत अधिक समय तक जीवित नहीं रहा, कारण था आन्दोलन के समर्थक लोगों पर ब्रिटिश सरकार के अत्याचार । सरकारी स्कूलों और नौकरियों के दरवाज़े इस आन्दोलन के समर्थकों के लिए बंद होने लगे थे । 1909 तक आते-आते यह आन्दोलन समाप्तप्राय हो गया, जिसका सबसे बड़ा कारण था कि बंगाल के बाहर पूरा देश इस गांधीवादी विचारधारा और अंग्रेज़ों से संघर्ष करने को तैयार नहीं था। एडमिरल बंगले के अन्दर मेडलिन के रहन-सहन को देखकर उपन्यास की कथा से यह बिल्कुल भी पता नहीं चलता कि बाहर की दुनिया कैसी है । एक पात्र नवीन कहता है कि "भारत से जुड़े उनके बाकी अनुभव अस्पष्ट और रंग-बिरंगे तो थे मगर प्रवासी ब्रिटिश जीवन की नाटकीय प्रस्तुति के प्रच्छन्न पृष्ठपट जैसे थे । ऊँचे लोग इस जीवन के सामाजिक पिरामिड के शिखर पर थे । अलगाव जितना ज्यादा था, रिसाव उतना कम था ।"[1]

भारत में रहकर मेडलिन का बचपन जिस विलासिता से भरा हुआ था, उससे भारत के तत्कालीन समय में होने वाले संघर्ष का बिल्कुल भी पता नहीं चलता है । लेखक ने बंग-भंग की घटना का उपन्यास में न तो उल्लेख ही किया है और न ही उसका कोई प्रभाव बंगले के अन्दर के जीवन पर दिखाया है ।

मेडलिन का यूरोप वापस लौटना

दो वर्ष भारत में रहने के बाद मेडलिन अपने परिवार के साथ लन्दन वापस चली जाती है । सभ्यता, संस्कृति, ज्ञान-विज्ञान, कला-कौशल में उस समय यूरोप

---

[1] वही : पृ-22

शिरोमणि था । मेडलिन को भी तब प्रकृति के बीच समय बिताना, घुड़सवारी करना और पियानोला पर बीदोवेन की धुन बजाना बहुत पसंद था । बीदोवेन के संगीत को मेडलिन स्वयं बजाने का प्रयास करती थी । जितना प्रेम मेडलिन को प्रकृति से था उतना ही संगीत से लगाव भी था । मेडलिन बहुत ही शांत स्वभाव वाली युवती थी । जिसका झुकाव ईश्वर और अध्यात्म की ओर ज्यादा था । अपने परिवार से बाहर भी मेडलिन का संपर्क किसी के साथ न था, एक ओर जहाँ मेडलिन की रूचि संगीत की ओर बढ़ती जा रही थी वहीं दूसरी ओर यूरोप में प्रथम विश्वयुद्ध के बादल गहरे होने लगे थे ।

यूरोप के नागरिक इस युद्ध के साथ थे । लेखक के अनुसार जिस दिन युद्ध की घोषणा हुई उस दिन पूरे लन्दन सहित मेडलिन का परिवार भी बकिंघम पैलेस के सामने सड़कों पर उतर आया था । सबने मिलकर ईश्वर से ये प्रार्थना की थी- 'ओ 'गॉड अवर हेल्प इन एजेज़ फर्स्ट' और 'गॉड सर्व द किंग' ।[1] ऐसी ही अन्य प्रार्थनायें भी करीब पांच लाख से भी अधिक लोग एक साथ मिलकर कर रहे थे । युद्ध की घोषणा ने सब लोगों के लिए राहत का काम किया था । सभी बुद्धिजीवी वर्ग इस युद्ध के समर्थन में थे ।

"यह युद्ध नरसंहार की कई नई तकनीकों-मशीनगन, गैस, पनडुब्बी, हवाई जहाज़ का इस्तेमाल कर रहा था और कत्ले आम की और भी कई नई तकनीकें इजाद कर रहा था ।"[2]

इतिहासकार विद्यालंकार के अनुसार - 'बींसवी सदी के आरंभ में अनेक बार ऐसी घटनाएं घटीं जिनसे युद्ध के बादल आकाश में मंडराने लगते और हथियारों की झंकार सुनाई पड़ने लगती थी । जंगी जहाज़ों और हथियारों के निर्माण के लिए पैसा पानी की तरह बहाया जा रहा था । फ्रांस और जर्मनी के युद्ध में बेल्जियम शामिल नहीं था और

---

[1] वही : पृ-58

[2] वही : पृ-58

न ही वह इसका हिस्सा बनना चाहता था । फ्रांस ने अपनी उत्तरी सीमा पर किलाबंदी कर रखी थी जिसे तोड़ना आसान न था। इसके लिए जहाँ एक ओर जर्मनी ने बेल्जियम को युद्ध के लिए आमंत्रित किया वहीं दूसरी ही ओर इंग्लैंड ने उसकी सुरक्षा की जिम्मेदारी उठाई थी । फ्रांस तक पहुँचने के लिए जेर्मनी को बेल्जियम से होकर गुजरना पड़ता, जिसके लिए बेल्जियम राजी नहीं था । इस विवाद के बीच जर्मनी ने इंग्लैंड की बेल्जियम से की जाने वाली इस संधि को 'केवल एक कागज़ के टुकड़े की ही संज्ञा दी' अन्तर्राष्ट्रीय संधि को जर्मन लोग कागज़ का टुकड़ा समझते थे, इस बात से सारा संसार उद्विग्न हो उठा । अत: 4 अगस्त, 1914 को जर्मन सेनाओं के बेल्जियम में प्रवेश होते ही उसने जर्मनी के विरूद्व युद्ध की घोषणा कर दी थी।'

जब युद्ध अपने चरम पर था तब मेडलिन ज्यादातर अपनी माँ के साथ घायलों के लिये बैंडेजिस बनाने में व्यस्त रहती थी । एक ओर जहाँ सैनिक प्रत्यक्षत: युद्ध में शामिल थे वहीं दूसरी ओर मेडलिन जैसे परिवार भी परोक्षत: शामिल थे । हजारों की संख्या में लोगों को घायल और मरते हुए देखना अब उन्हें अच्छा नहीं लगता था । वह समय उनके लिए बहुत अधिक बोझिल हो जाता था जब फ्रांस के मितभाषी लोग जर्मन लोगों के बारे में इस तरह की बातें किया करते थे मानो वे लोग कोई इंसान नहीं कुत्ते बिल्ली हों। इन सब बातों को सुनकर मेडलिन को घुटन महसूस होती थी और युद्ध में घायल लोगों के लिए बैंडजिज़ तैयार करते-करते अब वह थक चुकी थी। पहले तो सभी लोग इस युद्ध के साथ थे पर जैसे-जैसे इसके परिणाम सामने आने लगे तो लोगों का मनोबल टूटने लगा । युद्ध से पहले जो उत्सुकता लोगों के मन में भरी हुई थी अब वह हताशा में बदल गयी थी । जब युद्ध समाप्त हुआ तो लोगों के मन में संतोष था । नवीन के शब्दों में "केवल एक शुक्रिया का भाव झलकता है कि चलो बंदूकें शांत तो हुईं नरसंहार थम गया और बचे हुए लोग अब शीघ्र घर लौटेंगे..."[1] युद्ध के पहले के

---

[1] वही : पृ-59

उल्लास और युद्ध के बाद होने वाले मोहभंग से मेडलिन और यूरोपवासियों के साथ ही अन्य देशों के लोग भी उस नरसंहार की विभीषिका से परिचित हो चुके थे । युद्ध में हुई धन-जन की इस हानि से पूरा संसार प्रभावित हुआ था ।

प्रथम विश्वयुद्ध की इस विभीषिका ने न केवल यूरोप को ही बल्कि अन्य देशों को भी नुकसान पहुँचाया था । अन्य देश भी इस युद्ध में होने वाले नरसंहार और धन हानि से अछूते नहीं रहे थे । लाखों लोग, अनगिनत धनराशी और विज्ञान की नयी-नयी तकनीकों ने जहाँ एक और विश्व को उसकी ताकत का अनुभव कराया वहीं दूसरी ओर उस ताकत का दुरूपयोग करने से होने वाले नुकसान का भी पाठ पढ़ा दिया था । जिसने लोगों की मनोस्थिति को भी झकझोर कर रख दिया था ।

युद्ध समाप्त होने के वर्षों बाद भी लन्दन और जर्मनी के संबंधों में बहुत अधिक सुधार नहीं आया था । लेकिन मेडलिन की संगीत में रूचि के कारण वह लन्दन में एक संगीत कार्यक्रम करवाना चाहती थी । मेडलिन ने इंग्लैंड में फ्रेडरिक लैमंड के तीन संगीत कार्यक्रम आयोजित करवाए । हालाँकि लैमंड स्कॉटिश मूल के थे लेकिन जर्मनी में काफी लम्बे समय तक रहने पर जर्मन बन गए थे । इसलिए उनके इंग्लैंड आने पर विवादास्पद स्थिति की गुंजाइश थी, लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ । पांच दिन तक लैमंड इंग्लैंड में ही रहे । इन पांच दिनों में उनके तीन संगीत कार्यक्रम थे । इन्हीं पांच दिनों में मेडलिन का अत्यधिक समय लैमंड के साथ गुजरा । यह मेडलिन के जीवन में पहली बार था जब वह किसी पुरुष के साथ अकेले समय व्यतीत कर रही थी । युवावस्था में किसी पुरुष के आत्मीय और प्रेमपूर्वक व्यवहार की ओर मेडलिन का आकर्षित होना स्वाभाविक था । इस आकर्षण का प्रभाव काफी लम्बे समय तक उन पर बना रहा । लेखक कहता है कि "जब लैमंड की विदाई का समय आया, मेडलिन की दुविधा यह थी कि जादुई आकर्षण लैमंड के संगीत तक ही सीमित नहीं रहा वह उनके व्यक्तित्व के

साथ भी जुड़ गया । सीधे-सीधे कहा जाए तो वे उस 56 वर्षीय पिअनोवादक को दिल दे बैठी थीं,..."[1]

भारत और भारतीयों पर प्रथम विश्वयद्ध के प्रभाव

प्रथम विश्वयुद्ध के प्रभाव भारत पर भी अन्य देशों की ही तरह पूर्णत: दृष्टि गोचर थे। इससे न केवल राजनीतिक अपितु सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए । 1914-1918 के बीच एक समय ऐसा भी आया था जब भारत में ब्रिटिश सरकार के केवल 15,000 सिपाही ही बचे रह गये थे । उसी समय ब्रिटिश सरकार को कमजोर जानकर भारतीय क्रांतिकारियों ने राजनैतिक डकैतियां और हत्याएं शुरू कर दी थीं ।

'मीरा एंड दी महात्मा' उपन्यास में एक क्रांतिकारी पात्र पृथ्वी सिंह है । जो कुछ समय के लिए सेवाग्राम आश्रम में रहने आता है । मीरा की अंग्रेज़ी अच्छी होने पर बापू ने मीरा को पृथ्वी सिंह के अंग्रेज़ी में लिखे जाने वाले संस्मरणों का संपादन कार्य सौंपा था, जिसमें उसके वीरता भरे प्रसंगों का उल्लेख है । उन्हीं संस्मरणों से नवीन को पता चलता है कि प्रथम विश्वयुद्ध शुरू होने से कुछ दिनों पहले ही यूरोप से कुछ पंजाबी कलकत्ता भेजे गए थे जिनमें से एक था पृथ्वी सिंह । संस्मरणों में पृथ्वी सिंह ने बताया है कि 5 अगस्त 1914 को सैन फ्रांसिस्को से कलकत्ता के लिए एक जहाज़ रवाना हुआ जिसमें ग़दर-पार्टी के 100 से अधिक सदस्य शामिल थे । जब जहाज़ हांगकांग पहुंचा तो पृथ्वी सिंह और अन्य क्रांतिकारियों को लगा कि अगर वे अपने हथियारों के साथ ब्रिटिश उपनिवेश में प्रवेश करेंगे तो उन्हें जेलों में डाल दिया जायेगा और उनकी क्रांति भारतीय तट पर पहुँचने से पहले ही खत्म कर दी जाएगी। मजदूरों ने अमरीकी सिपाहियों

---

[1] वही : पृ-62-63

द्वारा पकड़े जाने के डर से हथियार समुद्र में फेंक दिए थे और कलकत्ता पहुँचते ही इन पर कार्रवाई भी की गयी थी ।

इसी घटना के लिये विपिन चन्द्र के इतिहास ग्रंथानुसार में कहा है कि - "भारतीय अप्रवासियों ने ग़दर आन्दोलन को अमरीका में पहले ही प्रबल बना दिया था जिससे की वहाँ रहने वाले अनेक पंजाबी अमरीकियों के खिलाफ हो चुके थे । ये लोग लगातार कनाडा और अमरीका में आन्दोलन कर रहे थे इस कारण कनाडा सरकार ने भारतीयों का प्रवेश बंद कर दिया । कनाडा सरकार ने एक अप्रवासी कानून बनाया जिसके तहत कनाडा में केवल उन लोगों को प्रवेश मिल रहा था जो भारत से सीधे यात्रा करके आयें हों ।

लेकिन नवम्बर 1913 को कनाडा सरकार ने ऐसे 35 भारतीयों को प्रवेश दिया जो लगातार यात्रा करके नहीं आये थे । अदालत के इस फैसले से उत्साहित होकर एक भारतीय नागरिक गुरदीतसिंह ने एक जहाज़ किराये पर लिया और उसे कनाडा की तरफ ले गया । इसमें 376 यात्री मौजूद थे । बैंकोवर के पास पहुँचते ही पुलिस ने इस जहाज़ की घेरा बंदी कर ली और फिर इस जहाज़ को कनाडा की जल सीमा से बाहर लाते हुए विश्वयुद्ध छिड़ गया और ब्रिटिश सरकार ने इसे कलकत्ता लाने का आदेश दिया । कलकत्ता पहुँचते ही इन यात्रियों का पुलिसवालों से जमकर संघर्ष हुआ और 18 यात्री मारे गये, 202 जेल भेज दिए गये और कुछ निकल भागने में कामयाब रहे ।"

परन्तु जैसा कि लेखक ने हमें इस उपन्यास में बताया है इतिहास से वैसी जानकारी नहीं मिलती है । **विद्यालंकार** के इतिहास से पता चलता है कि इन क्रांतिकारियों का देश के बड़े नेताओं ने साथ नहीं दिया था । बल्कि ग़दर पार्टी के इन कांतिकारियों को, बर्लिन स्थित इनके नेताओं को और भारत के ख़ुफ़िया क्रांतिकारियों को जर्मनी से मदद मिलती थी । जिसके मंसूबों में ब्रिटिश सरकार को कमजोर करना शामिल था । भारत में सभी बड़े नेता इन क्रांतिकारियों के खिलाफ थे ।

लेखक सुधीर कक्कड़ ने पृथ्वी सिंह द्वारा बताई गयी इन घटनाओं को उपन्यास में ही काल्पनिक भी कहा है । "भारतीय स्वाधीनता संघर्ष की कई काल्पनिक घटनाओं में एक उस जहाज़ की कहानी है, जो 5 अगस्त 1914 को सैन फ्रांसिस्को से कलकत्ता के लिए रवाना हुआ था ।"[1] 'पृथ्वी सिंह के माध्यम से उपन्यास में लेखक ने ग़दर पार्टी में आज़ादी के लिए फैले हुए जूनून को दिखाया है ।' पृथ्वी सिंह की काल्पनिक कहानियों से लेखक ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि किस तरह लोगों में आज़ाद होने की भावना तीव्र होती जा रही थी और इसके लिए वे कुछ भी करने को तैयार थे ।

प्रथम विश्वयुद्ध ने भारत के सामाजिक, आर्थिक अंतर्विरोधों को भी तीव्र कर दिया था, जिसमें कि संपत्ति का दोहन, हस्तकलाओं का ह्रास, राजस्व का दबाव, जातिगत भाषागत गतिविधियों का तीव्र होना, साथ ही श्रमिक वर्ग और पूंजीवाद के बीच खाई का गहरा होना भी स्वाभाविक था । परिणामत: किसान आन्दोलन, वर्णगत भेदभाव और आंचलिक भावनाओं ने भी जोर पकड़ लिया था । जिसने आगे चलकर 1925 में त्रावणकोर के ऊंच-नीच, भेदभाव और हिन्दू-मुस्लिम झगड़ों का विराट रूप ले लिया था। इसके बाद उपन्यासकार ने कहानी को वापस भारत के स्वतंत्रता संघर्ष से जोड़ दिया है।

<u>1919 साबरमती आश्रम</u>

1919 में महात्मा गाँधी ने साबरमती आश्रम की स्थापना के लिए साबरमती नदी के तट का चयन बहुत ही सावधानी से किया था । आश्रम में बापू की कुटिया और कस्तूरबा (बा) का कमरा, रसोईघर, भण्डार घर और आश्रमवासियों के रहने के कमरे

---

[1] वही : पृ-180

बने हुए थे । "200 वर्ग फुट की इस छोटी-सी जगह से वे आश्रम की गतिविधियों पर नज़र रखते थे, साथ ही भारत के स्वतंत्रता संघर्ष का भी संचालन करते थे ।"[1]

जब महात्मा गाँधी ने रौलेट एक्ट के खिलाफ सत्याग्रह की घोषणा की थी, उसी समय साबरमती आश्रम की भी स्थापना हुई थी । भारत में स्वदेशप्राप्ति के लिए यह उनका प्रथम प्रयास था । जिसके संचालन के लिए उन्होंने साबरमती आश्रम को अपना कार्यालय बनाया था।

1920-1922 सविनय- अवज्ञा

रौलेट सत्याग्रह के कुछ समय बाद ही जलियांवाला बाग़ हत्याकांड घटा, जिससे कि पूरा देश बहिष्कार पर उतर आया और ब्रिटिश सरकार को जड़ समेत भारत से उखाड़ फेंकना चाहता था । इसी से प्रभावित होकर प्रिंस ऑफ़ वेल्स का स्वागत भी देश भर में काले झंडों से किया गया था । 1922 में जब सविनय अवज्ञा हुआ महात्मा गाँधी ने वायसराय को एक पत्र लिखा, जिसमें लिखा था -"यदि सरकार राजनीतिक स्वतंत्रता बहाल नहीं करेगी, राजनीतिक बंदियों को रिहा नहीं करेगी, तो वे देशव्यापी सविनय अवज्ञा छेड़ने को बहाल हो जायेंगे ।"[2]

लेखक सुधीर कक्कड़ ने उपन्यास के एक पात्र नवीन के माध्यम से यह सन्देश दिया है कि किस तरह से सविनय अवज्ञा और तत्कालीन असहयोग आन्दोलन ने देश के युवाओं में आज़ादी की भूख जगा दी थी । नवीन उच्च वर्ग से सम्बन्ध रखता है । उस समय उच्चवर्ग के लोग अपने बच्चों को स्नातक की शिक्षा देकर उन्हें ICS की परीक्षा में उत्तीर्ण होने की ओर अग्रसर करते थे । उपन्यास में नवीन के पिता की भी कुछ ऐसी ही इच्छा है, पर नवीन ऐसा नहीं चाहता है । स्नातक की परीक्षा में उतीर्ण

---

[1] वही : पृ-30

[2] विपिन चन्द्र : पृ-168

होने के बाद वह हिन्दी से एम.ए करके साहित्य के क्षेत्र में जाना चाहता है और साथ ही महात्मा गाँधी का अनुयायी भी बनना चाहता है । नवीन ने जब पिता को अपनी इस इच्छा के बारे में बताया तो पिता की प्रतिक्रिया क्रोध से भरी हुई थी वह कहता है "जब मैंने कहा कि मैं हिन्दी में एम.ए करना चाहता हूँ पिता बहुत नाराज़ हुए । वे मुझे कृतघ्न कहने लगे और घर से बाहर निकालने की धमकी दे दी ।"[1]

आगे वह कहता है कि "उन्होंने महात्मा गाँधी को भला-बुरा कहा, जिन्होंने उस साल सरकार से असहयोग और सिविल नाफ़रमानी का आह्वान किया था और जिसका देश के युवकों पर भी असर पड़ा था ।"[2]

तत्कालीन असहयोग और सिविल नाफ़रमानी ने देश के युवाओं को अत्यधिक प्रभावित किया था । 1922 के शुरुआती दिनों में महात्मा गाँधी ने सविनय अवज्ञा आन्दोलन की घोषणा पूरे देश में कर ज्यादा से ज्यादा लोगों से इसमें भाग लेने की अपील भी की थी । इस आन्दोलन का हिस्सा बनने के लिए युवक भी अत्यधिक उत्साहित थे । महात्मा गाँधी का भी मत था कि देश का भविष्य युवाओं के कन्धों पर ही आश्रित है, इसलिए उन्होंने युवाओं से भी इस आन्दोलन में बड़ी संख्या में भाग लेने की अपील की ।

इसी आन्दोलन का प्रभाव लेखक ने उपन्यास के दूसरे पात्र साहित्यकार प्रेमचन्द पर भी दिखाया है । उपन्यास में प्रेमचंद गोरखपुर के सरकारी स्कूल में हिन्दी के अध्यापक हैं । 1920 में गोरखपुर में हुई जनसभा में गांधीजी का भाषण सुनने के बाद उन्होंने अपनी नौकरी से इस्तीफ़ा दे दिया है । वे कहते हैं कि "कई लोगों ने खासकर मुझे पसंद करने वाले प्रिंसिपल ने मुझे इस्तीफ़ा वापस लेने का अनुरोध किया । उन्होंने कहा तुम कैसे रहोगे कम से कम अपने परिवार के भविष्य के बारे में तो सोचो । लेकिन

---

[1] वही : पृ-68

[2] वही : पृ-68

कोई भी मेरे संकल्प को डिगा न सका ।"[1] उस समय प्रेमचंद की ही तरह अनेक लोगों ने अपनी आर्थिक स्थिति का ध्यान न रखते हुए ब्रिटिश सरकार की नौकरियों से इस्तीफे दे दिए थे ।

सविनय अवज्ञा आन्दोलन की घोषणा होते ही लोग ब्रिटिश सरकार के खिलाफ खड़े हो गए थे । सुमित सरकार ने "आधुनिक भारत" में दो स्तरों पर इसका विश्लेषण किया है – पहला है अखिल भारतीय आन्दोलन का चरण जिसे गाँधीवादी नेतृत्व निर्धारित करना चाहता था और दूसरा विशिष्ट सामाजिक समूहों और वर्गों की भूमिका।

प्रथम चरण में महात्मा गाँधी ने अपील की थी कि **विद्यार्थी** सरकारी नियंत्रण वाले **विद्यालयो** को और वकील वकालत को छोड़ दें । दूसरी तरफ पढ़े-लिखे लोगों ने स्वेच्छा से चरखा कातने का फैसला लिया । चरखा कातना शहरी और ग्रामीण लोगों के बीच समरूपता का प्रतीक बन गया था लेकिन इस **बुद्धिजीवी** आन्दोलन का शीघ्र ही पतन हो गया । बम्बई में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक ने अधिक संघर्षपूर्ण रुख अपना लिया जिसके अंतर्गत विदेशी कपड़ों का बहिष्कार और प्रिंस ऑफ़ वेल्स के भावी आगमन का बहिष्कार भी शामिल था । जहाँ स्वयंसेवक जत्थों की बड़े पैमाने पर भरती हो रही थी, वहीं दूसरी ओर मोंटेग्यू ने हाल ही में लागू सुधार-योजना के शीघ्र संशोधन की भी बात की, मगर महात्मा गाँधी इस पर कोई समझौता नहीं करना चाहते थे । अंत में महात्मा गाँधी ने 1922 में फरवरी के महीने में शांति पूर्ण तरीके से पूरे देश में सविनय अवज्ञा आन्दोलन छेड़ने की बात की थी ।

दूसरा इस आन्दोलन में उच्च एवं मध्य वर्गों के आत्मबलिदान का कोई विशेष प्रभाव न पड़ा विभिन्न सामाजिक समूहों की इस समय विभिन्न प्रतिक्रियाएं थीं । व्यापारी वर्ग का समर्थन मिलने से कांग्रेस की आर्थिक स्थिति में निश्चय ही सुधार आना था । असहयोग आन्दोलन को व्यापारी वर्ग का समर्थन मिल रहा था और यह

---

[1] वही : पृ-150

देखकर ही ब्रिटिश सरकार घबरा गयी । चरखे के प्रति संभावित ओद्यौगिक वैमनस्य देख गाँधी जी ने यंग इंडिया में अनेक लेख भी लिखे । इसी बीच देश की कपड़ा मिलों में अनेक हडतालें हुईं । जिसका कारण था पूँजी और श्रम के बीच संबंधों को नियमित करना । किसान, गरीब और अछूत जाति के विकास को गाँधी जी ने सदैव प्राथमिकता दी । हिन्दू-मुस्लिम एकता कुछ समय के लिए ही सही लेकिन एक सशक्त हथियार बन गई । छुआछूत के सम्बन्ध में अधिक प्रगति दिखाई नहीं पड़ी, लेकिन गाँधी जी इस मुद्दे को राष्ट्रीय राजनीती के मंच पर पहली बार लेकर आये। गाँधी जी ने सदैव वर्ग विभाजन और छुआछूत को पाटने का प्रयास किया। असम, बिहार, उड़ीसा, गुजरात में तो असहयोग आन्दोलन जोरों पर था, मगर महाराष्ट्र में यह कमजोर पड़ गया।

वहीं दूसरी ओर विपिन चन्द्र ने असहयोग आन्दोलन के लिए अपने इतिहास ग्रन्थ में बताते हैं कि "सितम्बर में कलकत्ता के कांग्रेस अधिवेशन में अनेक विरोधों के बावजूद भी असहयोग आन्दोलन को मंजूरी दे दी गयी 1921 में पूरे देश में इस आन्दोलन की लोकप्रियता बढ़ी । गांधीजी ने मुसलमानों के साथ मिलकर पूरे देश का दौरा किया । हजारों छात्रों ने स्कूल कॉलेज छोड़ दिए । सबसे अधिक सफल रहा विदेशी कपड़ों के बहिष्कार का आन्दोलन, चरखे और खादी का खूब प्रचार हुआ । प्रिंस ऑफ़ वेल्स को 17 नवम्बर 1921 को भारत आना था जिसका स्वागत वीरान सड़कों, बंद दरवाजों और कपड़ों की होली जलाए जाने से हुआ । असहयोग आन्दोलन दिन-प्रतिदिन प्रगति कर रहा था । असम और बंगाल में भी कपड़ा मिलों में हड़तालें हुईं । इस आन्दोलन का फायदा ब्रिटिश सरकार ने सम्प्रदायवाद को बढ़ावा देकर उठाया । इसने आंचलिक भेदभाव को भी बड़े पैमाने पर भड़काया।"

लेखक ने उपन्यास में इन घटनाओं का विस्तार से उल्लेख नहीं किया है । सांकेतिक दृष्टि से केवल यही दिखाया है कि सविनय-अवज्ञा आन्दोलन बिजली-की तरह पूरे देश में फ़ैल गया । चौरीचौरा में हुई हिंसक घटना के बाद बापू ने 5 दिन का उपवास

किया था । जब इस आन्दोलन की शुरुआत हुई तब तक देश ब्रिटिश सरकार की ताकत का सामना करने को तैयार नहीं था । सविनय-अवज्ञा की हार ने महात्मा गाँधी को इस बात का अनुभव करा दिया कि धैर्य और समझदारी से ही देश को आजाद करवाया जा सकता है ।

बारदोली में जो सत्याग्रह आन्दोलन शुरू किया जाना था, उसके लिए महात्मा गाँधी ने शांति बनाये रखने की अपील की थी, जिससे कि सारा ध्यान बारदोली पर केन्द्रित किया जा सके । मगर ऐसा संभव नहीं हो पाया, 5 फरवरी 1922 को चौराचोरी में कांगेस और खिलाफत आन्दोलन का जुलूस निकला । पुलिसवालों ने इस भीड़ पर हमला किया, जिसके प्रतिउत्तर भीड़ ने पुलिसवालों पर हमला बोल दिया और थाने में आग लगा दी 22 पुलिसकर्मी मारे गए । परिणामस्वरूप महात्मा गाँधी ने आन्दोलन छः वर्षों के लिए स्थगित कर दिया । आन्दोलन में घटी घटनाओं के बाद उन्हें 3 साल की जेल हो गयी ।

उपन्यास में भी लेखक ने असहयोग आन्दोलन से युवकों पर पड़ने वाले प्रभाव को नवीन और प्रेमचंद के माध्यम से दर्शाया है कि किस तरह से उन्होनें बापू के विचारों को अपनाया और उनका समर्थन किया । ब्रिटिश सरकार के खिलाफ कदम उठाने के लिए सरकारी नौकरियों से त्यागपत्र दिया और हजारों छात्रों ने स्कूल, कॉलेजों का बहिष्कार किया और पूरे देश में इसे सशक्त भी बनाया । देश के युवाओं के योगदान के बिना यह आन्दोलन आगे नहीं बढ़ सकता था । लेखक ने उपन्यास में केवल युवा वर्ग पर ही इसका प्रभाव दिखाया है । मजदूर वर्ग, कामगारों, महिलाओं, व्यापारियों, अछूत वर्ग या पिछड़े हुए लोग जिन्हें भर पेट खाना भी नहीं मिलता था उनके योगदान को उपन्यास की इन घटनाओं में कहीं भी लेखक ने स्थान नहीं दिया है । गुलामी से छुटकारा पाने के लिए किस प्रकार योजना बनाई जाए यह तो सुधीर कक्कड़ ने कथा में दिखाया है लेकिन लेखक उस उपेक्षित वर्ग को इन घटनाओं में वह स्थान नहीं दे

पाया है जिसका वास्तव में वह हकदार है। इतिहासकार के विचार इस विषय में अधिक उपयुक्त हैं।

विपिन चन्द्र कहते हैं - "हिन्दुस्तान की वह जनता जिसे फिरंगी दीन-हीन और मूर्ख समझते थे आधुनिक राष्ट्रवादी राजनीती की वाहक हो सकती है। भारतीय जनता के त्याग और बलिदान ने दमनकारी सत्ता को ये जता दिया कि देश की आजादी की भूख पढ़े-लिखे लोगों को ही नहीं, निरक्षर जनता को भी सताती है।"[1]

[1] विपिन चन्द्र: पृ-173

1923-1942

मीरा का भारत में आगमन

सविनय अवज्ञा को स्थगित करने के पश्चात् महात्मा गाँधी रचनात्मक कार्यों में संलग्न हो गये थे। सत्याग्रहियों की एक ऐसी फ़ौज गांधीजी ने तैयार की जो सामाजिक-आर्थिक कार्यक्रमों में भाग लेकर आंदोलनों के प्रशिक्षण की जिम्मेदारी निभा रही थी । साबरमती आश्रम में सूत कातना एवं अन्य ग्रामीण उद्योगों को बढ़ावा देना, अछूत व अस्पृश्य लोगों का सामाजिक उत्थान करना इस प्रशिक्षण में सम्मिलित था ।

जब मेडलिन दूसरी भारत आयीं तो देश में शांति का काल था और असहयोग आन्दोलन को वापस लिए हुए चार साल बीत चुके थे । गांधीजी को खराब स्वास्थ्य के कारण दो वर्ष पहले ही जेल से रिहा कर दिया गया था। मेडलिन जब साबरमती आश्रम में रहने आयीं तब आश्रम तब छः वर्ष पुराना हो चुका था। आश्रम में सब लोग सादगी और अनुशासन से रहते थे। हालाँकि मेडलिन ने भारत में आने से पहले खुद को आश्रम के जीवन के लिए तैयार कर लिया था, पर आश्रम उसकी कल्पना से बहुत परे था। नवीन कहता है कि "आश्रम से मेडलिन को जो अनुभव प्राप्त हुआ वह उनकी अपेक्षाओं से काफी भिन्न था। करीब दो सौ पुरुषों, महिलाओं और बच्चों वाला आश्रम शारीरिक श्रम, मौन और प्रार्थनाओं में तपोवन वाला जीवन जीने वाले समुदाय से ज्यादा शोरगुल और आपसी कलह में उलझे ग्रामीण समुदाय जैसा था।"[1]

"पुरुषों के लिए आश्रम प्राचीन वन तपोवन वाले स्वरुप के साथ ऐसा शरण स्थल था जहां उनकी कल्पना के मुताबिक ऐसा जीवन जिया जा सकता था जैसा हजारों साल पहले जिया जाता था।"[2]

---

[1] वही : पृ-37

[2] वही : पृ-37

साबरमती आश्रम में किसी भी व्यक्ति के साथ ऊंच-नीच का व्यवहार नहीं किया जाता था, सब लोग एक समान रहते थे । लेकिन फिर भी वर्ण भेद एक ऐसी समस्या थी जो हजारों वर्षों से भारतीय समाज को खोखला कर रही थी । अंग्रेज़ों ने भी वर्णभेद को भारतीयों के ही खिलाफ हथियार बना कर इस्तेमाल किया । काले-गोरे का भेद तो अंग्रेज़ों की ही उपज थी । भारत में तत्कालीन समय तक जितने भी आन्दोलन छेड़े गए थे उनमें सबसे बड़ी कमी थी संगठन की । हालाँकि आश्रम में महात्मा गाँधी ने किसी के बीच कोई भेद नहीं किया था, सभी जाति के लोग सभी तरह के काम मिलजुल कर किया करते थे, जिसका सबसे बड़ा उदहारण बापू स्वयं थे । आश्रम में जब मेडलिन रहने आयीं तो लोगों की उनके प्रति भिन्न प्रतिक्रिया थी, जिसे देखकर बापू ने मेडलिन को ऐसा काम सौंपा जिसके लिए लोग सोच भी नहीं सकते थे अगली सुबह "महात्मा गाँधी एक हाथ में झाड़ू और दूसरे में बाल्टी भर पानी लिये साझा शौचालयों की ओर तेजी से बढ़ रहे थे ..."[1] "जल्द ही हम लोगों को पता चला कि महात्मा गाँधी ने मेडलिन को रोज मल से भरी बाल्टियाँ कम्पोस्ट के गड्ढे में उलटने वाले लोगों द्वारा साफ़ किये जाने के बाद शौचालयों को नारियल की झाड़ू से रगड़कर साफ़ करने का काम सौंप दिया था ।"[2]

समकालीन समय में मल ढोने का काम जो लोग करते थे वे अछूत माने जाते थे जिनके लिए मेहतर या पंचम्मा जैसे शब्दों का प्रयोग होता था । आज भी देश के कई हिस्सों में सफाई कर्मचारियों को अछूत की ही संज्ञा दी जाती है, जिसे छुआछूत की भावना ने आज भी प्रबल बना रखा है । महात्मा गाँधी का मत था कि देश के युवाओं को इस वर्ग भेद की गहराई को खत्म करने के लिए आगे कदम बढ़ाने चाहिए । अछूतों के **उद्धार** को ध्यान में रखते हुए वे नवीन के छात्रावास में भाषण देते हुए

---

[1] वही : पृ-35

[2] वही : पृ-35-36

TH22958

कहते हैं कि "स्वराज पाने का रास्ता यह है कि छात्र अपने शौचालयों की सफाई खुद करें और मल भी खुद फैंके और इसके लिए अछूत मेहतर का इस्तेमाल न करें ।"[1]

उपन्यास में एक ओर जहाँ महात्मा गाँधी आश्रम में अछूतों को समाज में बराबरी का स्थान दिलाने का प्रयास करते दिखते हैं । वहीं दूसरी ओर 'सुमित सरकार' के इतिहास ग्रन्थ से पता चलता है कि कांग्रेसी कार्यकर्ताओं ने अछूत जनता के बीच देश में छः अलग-अलग स्थानों पर आश्रम खोले जिनमें सूत कातने जैसी क्रियाएं शामिल थीं । बारदोली में 1927 में बच्चों की शिक्षा के लिए रात्रि पाठशालाएं खोली गयीं । आर्थिक-सामाजिक सुधार के लिए महात्मा गाँधी की अध्यक्षता में एक जांच कमेटी का गठन किया गया, जिसमें अध्ययन के पश्चात् अछूतों के लिए अंग्रेज़ों के व्यवहार को अमानवीय और शोषक घोषित किया गया, इसमें यह भी पता चला की औरतों के साथ यौन शोषण भी किया जाता था ।

विपिन चन्द्र के इतिहास में अछूतों के उद्धार की तत्कालीन स्थिति की घटना के अनुसार - "1925 में महात्मा गाँधी ने केरल का दौरा किया था जहाँ पर छुआछूत की जड़ें गहरी जमी हुई थीं । केरल के एक गाँव में एक मंदिर के चारों तरफ जो सड़क बनी हुई थी उस पर सवर्ण ही चल सकते थे, जिस पर अवर्णों को चलने का अधिकार प्राप्त न था । इन सब धर्माडम्बरों का विरोध करने के लिये केरल प्रदेश की कांग्रेस कमेटी ने महात्मा गाँधी के नेतृत्व में सत्याग्रह करने का निर्णय लिया, देश के कोने-कोने में यह खबर फ़ैल गयी परिणामतः अवर्णों के लिए सड़क प्रवेश खोला गया पर द्वार नहीं ।"

इन अछूतों में न केवल मल ढोने वाले बल्कि किसान और मजदूर वर्ग भी शामिल थे, जिनके बिना आज़ाद भारत की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी इन्होनें न केवल आजादी की लड़ाई में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, देश की प्रमुख राजनीतिक

---

[1] वही : पृ-71

हडतालें, प्रदर्शन और दमन भी इसी वर्ग के द्वारा संभव और साकार हो सके हैं, जो सदा उल्लेखनीय रहेगी । इन हडतालों, विरोधों, आंदोलनों ने आम जनता जिसमें अधिकतर निम्न जाति के लोग शामिल थे को यह अनुभव करा दिया कि वे भी ब्रिटिश सरकार के अत्याचारों पर रोक लगा सकते थे ।

अछूतों के उत्थान में मीरा की भूमिका

उपन्यास में नवीन बताता है कि अछूतों के उद्धार के लिए अकेले महात्मा गाँधी ही नहीं बल्कि मीरा भी उनके साथ प्रयासरत हैं । ऐसे कार्यों में मीरा ने उनका पूर्णत: साथ दिया है मीरा न केवल उनकी सेविका अपितु सहायक भी हैं जैसा कि बापू हमेशा से चाहते थे कि देश के कोने-कोने में लोग सूत कातना सीखें । इसके लिए 1927 में मीरा उत्तरी-बिहार के मधुबनी जिले में जाती है । जहाँ पर उन्होंने गरीब और पिछड़ी जाति की औरतों को कताई-बुनाई सिखाई। जब मीरा बिहार में अपने इस कार्य को फ़ैलाने के लिए कुटिया के अन्दर बैठकर कताई करती है तो "औरतें रुक-रुक कर उन्हें देखतीं । उन्हें उत्सुकता होती कि अंग्रेज मेम नीची जाति की औरतों के काम को इतना महत्व दे रही है ।"[1]

कानपुर अधिवेशन

उपन्यास में लेखक ने कानपुर अधिवेशन के बारे में बताया है कि 1925 के अंत में कानपुर में कांग्रेस का एक अधिवेशन होना था, जिसमें कि महात्मा गाँधी के साथ मीरा भी गयी थी । आश्रम से महात्मा गाँधी और मीरा तीन हफ्ते बाहर भी रहे। जब मीरा रेलगाड़ी से कानपुर जाने के लिए सफ़र कर रही थी, तो उस दृश्य को देखकर हैरान रह गयी कि महात्मा गाँधी के लिए लोगों के दिल में एक अटूट आस्था और विश्वास है ।

---

[1] वही : पृ-134

अपनी जिस आस्था के लिए मीरा सोचती थी कि केवल वही थी जो महात्मा गाँधी को ईश्वरप्राय मानती थी, उसी आस्था और प्रेम को भारतीय लोगों में देखकर वह आश्चर्य में पड़ गयी। इस दृश्य को रोमां रोलां को वे एक पत्र में लिखकर भेजती है – "छोटे बड़े जिस भी स्टेशन पर गाड़ी रुकती, महात्मा गाँधी की जय के नारे लगाती भीड़ हमारा स्वागत करती वक्त चाहे कोई भी हो। दिन हो या रात प्लेटफार्म पर खड़ी भीड़ आगे बढ़ती उस व्यक्ति की झलक पा लेना चाहती जो उसके लिए संत और ईश्वर के बीच की शख्सियत था। भारतीयों के लिए ये किसी दिव्यदर्शन से कमतर नहीं था।"[1]

आगे मीरा यह भी कहती है कि -"मैं इस दृश्य को हर जगह बार-बार देखकर हैरत में पड़ जाती, सैंकड़ों दुर्बल भूरी देह बापू के डिब्बे की खिड़की के सामने हाथ जोड़कर खड़ी हो जातीं। उनकी आँखों में उम्मीद की चमक उनके वस्त्रों की फटेहाली को ढँक लेती।"[2]

यह मीरा के लिए पहला अनुभव था जब उन्होंने महात्मा गाँधी के लिए भारतवासियों की आस्था को इतने करीब से देखा था। मीरा को ये सब देखकर यह ज्ञात हुआ की लोगों के हृदय में बापू के लिए कितना प्रेम और अटूट विश्वास है। उपन्यास में लेखक ने दिखाया है कि लोगों के इसी ईश्वर ने अपने आश्रमवासियों को सत्य का पाठ पढ़ाया और उसका उल्लंघन होने पर सज़ा भी दी।

कथाकार नवीन ने बताया है कि कानपुर अधिवेशन में सरोजिनी नायडू महात्मा गाँधी की जगह कानपुर अध्यक्ष बनीं। भारत में स्वाधीनता संघर्ष का यह दौर ऊर्जावान नहीं था फिर-भी महात्मा गाँधी ने अस्पृश्यता उन्मूलन और हिन्दू-मुस्लिम एकता जैसे महत्वपूर्ण कार्यों को कमजोर नहीं पड़ने दिया था। उनके अनुसार अंग्रेज़ों से आज़ादी स्वराज का केवल एक ही पहलू था, स्वतंत्र देश को मजबूत बनाने के लिए दूसरा पहलू

---

[1] वही : पृ-90

[2] वही : पृ-91

भी देखना जरुरी था । लेकिन उस समय जवाहरलाल नेहरु के संपर्क में आ रहे शिक्षित युवा महात्मा गाँधी के विचारों से सहमत नहीं थे ।

युवा वर्ग सिर्फ आन्दोलन चाहता था । वह महात्मा गाँधी के मार्ग पर नहीं चलना चाहता था। लेकिन महात्मा गाँधी का देश की आज़ादी को लेकर अपना मत था। रचनात्मक कार्यों जैसे घोर मेहनत वाले कार्यों में लोगों को शिक्षण देने के पीछे उद्देश्य था लोगों की सोच को विकसित करना । उन्हें यह समझाना की शांतिपूर्वक, बुद्धिमानी, धैर्य और समझदारी से ही आज़ादी को प्राप्त किया जा सकता है ।

1926 में स्वराजी विधानमंडलों में राष्ट्रीय मोर्चा बनाने में विफल रहे, जिसका कारण था आपसी मनमुटाव । जहाँ एक ओर चुनावों में स्वराजियों ने सफ़लता प्राप्त की वहीं दूसरी ओर सरकार ने राष्ट्रवादियों के बीच फूट डालने का प्रयास किया । स्वराजियों को उदारवादियों से, गरमपंथियों को नरमपंथी स्वराजियों से और हिन्दुओं को मुसलमानों से अलग करने में अब उनकी नीतियां सफल होने लगी थीं । इतने मनमुटाव होने पर भी स्वराजी फिर से एकजुट होने में सफल रहे ।

कानपुर अधिवेशन के बाद महात्मा गाँधी ने आश्रम से बाहर निकलना बिल्कुल बंद कर दिया । भाषण, कार्यक्रम, निमंत्रण वे किसी भी कार्यक्रम में सम्मिलित नहीं हुए, उन्होनें सबके लिए मना कर दिया । लेकिन इस बीच महात्मा गाँधी आश्रम के सभी कामों से जुड़े रहे । साथ ही उनकी प्राथमिकता आत्मकथा लिखना भी था जिसके अध्याय नवजीवन में गुजराती में छप रहे थे और महादेव भाई उन्हें अंग्रेजी में अनूदित करके यंग इंडिया में भी छापते थे । इस बीच मीरा और महात्मा गाँधी के प्रेमानुभूति के भी क्षण आयें । जब महात्मा गाँधी गवर्नर की बैठक के लिए ट्रेन से मुंबई रवाना हो रहे थे तो मीरा के बहते हुए आंसुओं को देखकर चिंतातुर हो गये । जितने दिन महात्मा गाँधी अहमदाबाद से बाहर रहे उतने दिन दोनों के बीच लगातार पत्रों से बात होती रही । लेकिन जब बापू आश्रम लौटे तो उनके व्यवहार में परिवर्तन हो चुका था ।

यह इसलिए नहीं था कि वे मीरा की ओर आकर्षित होने लगे थे, बल्कि इसलिए था कि यह आकर्षण उनके मनोबल को कमजोर बना रहा था । देश की इतनी नाजुक स्थिति में जब उन्हें देश का नेतृत्व करना था, उनकी कमजोरियां स्वयं उन पर ही हावी होने लगीं थीं।

1928

इसके बाद लेखक कथा को चार साल आगे ले जाता है - करीब चार साल बाद राजनैतिक हल-चल तेज़ होने लगी । इन चार सालों के बीच महात्मा गाँधी देश-विदेश के दौरे करते रहे "सक्रिय राजनीती से पूरे एक साल तक दूर रहने के बाद नई ऊर्जा से भरे महात्मा गाँधी उत्तर से दक्षिण, पूरब से पश्चिम दौरे कर रहे थे और महत्वपूर्ण सभा-सम्मेलनों में भाग ले रहे थे।"[1]

विपिन चन्द्र के अनुसार 1928 के शुरुआत में महात्मा गाँधी ने बारदोली में किसानों के सत्याग्रह को सहमति दी । इन्हीं अछूतों के उद्धार के लिए महात्मा गाँधी ने जिस बारदोली जांच समिति का गठन किया था उसमें नाई, धोबी, कहार, कुम्हार, मजदूर, कांग्रेसी स्वयंसेवक सब एक जुट हो गये, जब सरकार ने इसे दबाने की कोशिश की तो अछूतों ने सामाजिक बहिष्कार के अस्त्र का प्रयोग किया । जिसके कारण सरकार को कामगारों की कमी होने लगी, यहाँ तक की खाद्य सामग्री जैसी जरूरी चीजों से भी वंचित रहने के दिन आ गये थे । ब्रिटिश सरकार ने कभी ऐसी स्थिति का सामना नहीं किया था । महात्मा गाँधी के शब्दों में– "बारदोली संघर्ष चाहे कुछ भी हो स्वराज की प्राप्ति के लिए संघर्ष नहीं है। लेकिन इस तरह की हर चीज हमें स्वराज के करीब पहुंचा रही है, और हमें स्वराज की मंजिल तक पहुँचाने में शायद ये संघर्ष, सीधे स्वराज के

---

[1] वही : पृ-152

लिए संघर्ष से कहीं ज्यादा सिद्ध होगा ।" [1] एक तरह से कहा जाये तो बारदोली के संघर्ष ने कैटेलिस्ट का ही काम किया ।

'मीरा एंड दी महात्मा' में लेखक ने लार्ड इरविन के प्रस्ताव का संक्षिप्त वर्णन दिया है। 1928 में लार्ड इरविन ने महात्मा गाँधी को वार्ता के लिए दिल्ली बुलाया । यह सूचना मिलते ही पूरे देश में उम्मीद की एक किरण जाग गयी और लोगों को यह लगने लगा की शायद अब ब्रिटिश सरकार भारत को स्वराज सौंपने के विषय पर विचार करेगी । परन्तु ऐसा कुछ नहीं हुआ और महात्मा गाँधी को सूचना दी गयी कि सर जॉन साइमन की अध्यक्षता में भावी संविधान की सिफारिशों के लिए एक आयोग का गठन किया जायेगा । स्पष्टत: इस बार डोमिनियन स्टेट्स के लिए विरोध होने वाला था । "कांग्रेस ने साइमन कमीशन के बहिष्कार की और उसके दौरे के खिलाफ बड़े शहरों में प्रदर्शन करने की तैयारी पूरे देश में शुरू कर दी । यह जल्दी ही लोगों को और पूरे देश को ज्यादा व्यापक संघर्ष के लिए तैयार करने की पूर्व तैयारी थी ।"[2]

लेखक ने यह भी बताया है कि जहाँ एक और पूरा देश साइमन कमीशन के विरोध में उबल रहा था वहीं दूसरी ओर 1928 और 1929 के शुरू में महात्मा गाँधी को व्यक्तिगत शोक भी हुआ । उनके भतीजे और उनके प्रिय मित्र मगनलाल भाई थोड़े समय की बीमारी में ही चल बसे । प्रार्थना सभा में भाग लेने के अलावा अब वे आश्रम जीवन की और किसी गतिविधि में नहीं दिखते थे । "यंग इंडिया में उन्होंने बेहद मर्मस्पर्शी स्मृतिलेख 'माई बेस्ट कामरेड गोन' भी लिखा ।"[3]

साइमन कमीशन के लिए विपिन चन्द्र कहते हैं कि – 8 नवम्बर 1927 को आयोग की घोषणा की गयी, जिसके अंतर्गत किसी भी भारतीय को इस आयोग के लिए अयोग्य घोषित कर दिया गया "यह बात नरमदल के विचारों से सहमत लोगों के गले

---

[1] विपिन चन्द्र : पृ-188

[2] वही : पृ-152

[3] वही : पृ-153

के नीचे नहीं उतरी । इस आयोग के बहिष्कार का आह्वान किया गया जिसका लिबरल फेडरेशन ने समर्थन किया" "3 जनवरी 1928 को जैसे ही साइमन और उनके दोस्त बम्बई उतरे, कार्रवाई शुरू हो गयी । उस दिन सभी प्रमुख नगरों तथा कस्बों में हड़ताल रही तथा लोगों ने सामूहिक प्रदर्शनों में हिस्सा लिया, काले झंडे दिखाए गए ।"[1]

लेकिन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ही वह संगठन था जिसने इस बहिष्कार को जनांदोलन का रूप दिया । महात्मा गाँधी ने 12 जून 1928 के 'यंग इंडिया' में स्पष्टीकरण देते हुए लिखा कि बहिष्कार सिर्फ प्रस्ताव पारित करने तक ही सीमित नहीं रहा वे कहते हैं, "कहा जाता था की स्वतंत्रता का प्रस्ताव ही उचित जवाब है... आयोग की नियुक्ति (साइमन आयोग) को ही उचित उत्तर मिलना चाहिए, भाषण चाहे कितने ही बहादुरी से भरे हों, घोषणाएं चाहें कितनी ही साहसपूर्ण हों, उसको इसकी आवश्कता नहीं है, इसके लिए उचित कार्रवाई की जानी चाहिए।"[2]

साइमन कमीशन के खिलाफ पूरे देश में जो विरोध और राष्ट्रव्यापी संगठन था वह महात्मा गाँधी के वर्षों से खड़े किये गए सिपाहियों की रेजिमेंट को प्रदर्शित कर रहा था । देश में इस विरोध के बाद परिस्थितियाँ बदल चुकी थीं । भारत का हर व्यक्ति स्वतंत्र भारत के सपने देखने लगा था । उपन्यास में नवीन कहता है कि 1929 तक तनाव बहुत अधिक बढ़ चुका था यह - "दिसम्बर 1929 में तब अपने चरम पर पहुँच गया जब अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने लाहौर की बैठक में ब्रिटिश राज से पूर्ण स्वराज की मांग का प्रस्ताव पारित किया।"[3]

जब महात्मा गाँधी ने साइमन कमीशन के खिलाफ कदम उठाये तो देश के सभी लोग उनके आदेश पर निर्भर हो गए थे । सब लोग इस बात का इंतज़ार कर रहे थे कि स्वाधीनता संग्राम के लिए महात्मा गाँधी का अगला फैसला क्या होगा ? लेकिन

---

[1] विपिन चन्द्र: पृ-242

[2] विपिन चन्द्र: पृ-242

[3] वही : पृ-158

जब महात्मा गाँधी ने दो महीने की चुप्पी साध ली तो लोगों के मन में अलग-अलग विचार उनके लिए उभरने लगे । "कोई कहता कि वे संघर्ष से खुद को अलग कर रहे थे, कोई कहता कि संत गाँधी संत वाले काम में ही खुद को सीमित करने जा रहे थे -- आत्मा के मोक्ष के काम में । लखनऊ के कॉलेज छात्रों के बीच अफवाहें थीं कि वे अंग्रेज़ों को भगाने के लिए हिंसक संघर्ष का समर्थन करने जा रहे थे "[1] परन्तु इनमें से एक भी बात सत्य न थी । 1928 में होने वाले गाँधी इरविन समझौते से पहले नवीन महात्मा गाँधी से इजाज़त लेकर 3 महीने के लिए आश्रम से बाहर चला गया था । नवीन को अहमदाबाद में रहने वाले अपने दोस्तों से आश्रम में घटने वाली प्रत्येक गतिविधि के बारे में पता चलता रहता था । इस बीच बापू आश्रमवासियों के लिए काफी सख्त हो गये थे । प्रार्थना सभाओं में भी वे बार-बार अपने सत्य के प्रयोगों और अहिंसक सैनिकों में होने वाली विशेषताओं को दोहराते थे, जिनमें से पहला था 'आध्यात्मिक शुद्धता' और दूसरा था 'कड़ा अनुशासन' । महात्मा गाँधी चाहते थे कि "आश्रम के पुरुष, स्त्री और बूढ़े एवं बच्चे ब्रिटिश साम्राज्य से टक्कर लेने की घड़ी आने पर उनके प्रिटोरियाई सैनिकों जैसी भूमिका निभाएंगे ।"[2] आश्रम का वातावरण बहुत ज्यादा बदल चुका था, नवीन कहता है "उनकी अपनी ख़ास हंसी, जो आश्रम में हर कहीं सुनाई पड़ती थी, अब बीती हुई बात हो गयी थी ।"[3]

लेखक ने दिखाया है कि 1929 में देश पर राजनैतिक दबाव बढ़ने लगा उस समय नवीन ने साबरमती आश्रम जाने के लिए प्रेमचंद से एक पखवाड़े की छुट्टी मांगी, प्रेमचंद ने माधुरी का एक अंक निकालने के बाद नवीन को जाने की इजाज़त दे दी । देश में राजनैतिक दबाव बढ़ता देख नवीन ऐसे समय में महात्मा गाँधी के साथ रहना

---

[1] वही : पृ-158

[2] वही : पृ-154

[3] वही : पृ-155

चाहता था । वह खुद को उन चंद महत्वपूर्ण लोगों में से एक समझता था जिन्हें महात्मा गाँधी के पास रहने का अवसर मिला ।

नमक कानून

दांडी मार्च के दौरान नवीन आश्रम में ही था इस बार वह मीरा से तीन साल बाद मिला। नवीन ने जब मीरा को देखा तो मीरा के रूप-रंग में कोई बदलाव नहीं आया था, मीरा वैसी ही दिख रही थी, जैसी तीन वर्ष पहले दिखा करती थी । अब मीरा हिन्दी भी बड़े आत्मविश्वास के साथ बोल रही थी, वाक्यों के उच्चारण में काल और लिंग को आपस में इस प्रकार मिला रही थी कि उसमें गलतियों को पकड़ना बहुत मुश्किल होता । दांडी मार्च में घटने वाली घटनाओं के प्रसारण की वह लगातार सूत्रधार बनी हुई थी । बापू के कार्यक्रम की सारी जानकारी नवीन को मीरा से ही मिली । मीरा ने उसे बताया कि बापू देश के लोगों को कैसे एकजुट कर ऐसे सामूहिक भागीदारी के कार्यक्रम के बारे में सोच रहे हैं, "जो देश की गरीब से गरीब जनता में भी उत्साह का संचार कर दे ।"[1] "नमक कानून तोड़ने की बात सुनकर कांग्रेस ने अविश्वास दिखाया "नमक?!" कांग्रेस के नेताओं की यही अविश्वास से भरी प्रतिक्रिया थी,..."[2] मीरा ने नवीन को यह भी बताया कि उनके इस कार्यक्रम की सूचना एक पत्र के माध्यम से लार्ड इरविन को दी गयी थी ।

नमक कानून तोड़ने के लिए जब साबरमती से महात्मा गाँधी की सेना ने कूच किया तो हजारों की संख्या में लोग एकत्रित हो गए "यह सत्याग्रही सैनिकों का पहला दस्ता था जो देश की आज़ादी की निर्णायक लड़ाई लड़ने जा रहा था । उनका सैनिकत्व उनके कपड़ों या व्यक्तित्व से प्रकट नहीं होता था । उनकी वर्दी थी उनकी आँखों से

---

[1] वही : पृ-159

[2] वही : पृ-159

झांकता संकल्प, पैरों की स्फूर्ति और ब्रिटिश राज से आज़ादी के पवित्र लक्ष्य से प्रेरित उनके शरीर से फूटता उत्साह । दस्ते के आगे हाथ में लाठी लिए तेज क़दमों से चलता हुआ और अपने सैनिकों को अपने साथ कदम मिलाकर चलने के लिए मजबूर करता उसका कमांडर शिव से भिन्न ही था ।"[1]

दांडी यात्रा के दौरान देश में एक अविस्मरणीय दृश्य बन गया था । नमक सत्याग्रह में महात्मा गाँधी ने महिलाओं से विशेष रूप से अग्रगामी भूमिका निभाने के लिए कहा था । "उनका कहना था की महिलाओं को कमज़ोर कहना उनका अपमान है।"[2]

जिस प्रकार के दृश्य का निर्माण उपन्यासकार ने किया है, बिल्कुल वैसा ही दृश्य हमें इतिहास में भी मिलता है । यह घटना और इसका वातावरण लेखक की काल्पनिक उपज नहीं था, अपितु वास्तविक घटना ऐसे ही रूप में घटी थी जिसे लेखक ने अपने शब्दों में उल्लिखित किया है ।

नवीन नमक कानून तोड़ने के लिए जमा हुई इस भीड़ को देख कर अचंभित रह गया था । उपन्यास में उसने इस दृश्य को वर्णन किया है जो कुछ इस प्रकार था, आधी रात से ही लोग आश्रम के फाटक से लेकर कई किलोमीटर दूर तक जमा हो गये थे । ये सब लोग नदी के पार से और आस पास के गाँव से आ रहे थे । सत्याग्रहियों की इस सेना के जुनून की खबर को देश-विदेश और पूरी दुनिया में पहुंचाने के लिए जर्मन, फ्रांस आदि देशों के पत्रकार वहां मौजूद थे। फॉक्स मूवीटोन, जे आर्थर रैंक, पैरामाउंट न्यूज़ आदि जिनके नाम भारत में कभी सिनेमा के परदे पर भी नहीं देखे गये थे यात्रा के दिन ट्रकों पर छपे अपने प्रतीक चिह्नों से ही अपनी पहचान बता रहे थे ।

---

[1] वही : पृ-160

[2] विपिन चन्द्र: पृ-260

दांडी की यात्रा पूरी होने में अब केवल तीन दिन का ही समय बचा था । सत्याग्रहियों का इतना अधिक प्रभाव लोगों पर था कि वे जिस-जिस रास्ते से जाते थे उस हर मार्ग को लोगों ने बहुत सुंदर तरह से सजा रखा था । "सड़क के दोनों तरफ खिड़कियों, छज्जों, बरामदों को फूलों, अशोक और आम के पत्तों के तोरण द्वारों से सजाया गया था और उन जगहों पर औरतें-बच्चे भरे पड़े थे ।"[1]

'मीरा एंड दी महात्मा' में लेखक ने पाठक को बताया है कि 7 अप्रैल 1930 को मुट्ठी भर नमक हाथ में लेकर महात्मा गाँधी ने सिविल नाफ़रमानी का श्री गणेश कर खुलेआम सरकार की धज्जियाँ उड़ा दीं । "अहमदाबाद के कपड़ा मिल मालिक सेठ रणछोड़ भाई ने इस नमक के लिए 525 रूपये की बड़ी रकम अदा की ।"[2] ये सब देख ब्रिटिश सरकार ने एक बार फिर दमनात्मक कदम उठाये जवाहरलाल नेहरु, महात्मा गाँधी और अन्य बड़े नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया । जिसका मद्रास, कलकत्ता, कराची आदि बड़े नगरों में विरोधपूर्ण प्रदर्शन हुआ था । लोगों ने शराब की दुकानें जलाईं, उन प्रतिष्ठानों को नष्ट कर दिया जो सरकार की शक्ति के प्रतीक थे जैसे रेलवे स्टेशन, नगरपालिका के भवन, पुलिस स्टेशन आदि। यह हिंसात्मक प्रतिक्रिया 16 मई को मार्शल लॉ लागू करने पर बंद हुई ।

लेकिन इतिहास से ज्ञात होता है कि नमक कानून 6 अप्रैल 1930 को तोड़ा गया था । देश में पुनः शुरू किया गया सविनय अवज्ञा आन्दोलन इस बार ज्यादा ऊर्जावान था । विपिन चन्द्र के शब्दों में - महात्मा गाँधी ने ब्रिटिश राज को अभिशाप मानते हुए कहा कि "लगातार शोषण वाली व्यवस्था कायम करके इसने असंख्य दीन-हीन लोगों को दरिद्र बना दिया था ... राजनीतिक रूप से इसके कारण हमारी अवस्था भूदासों की सी हो गयी थी ।"[3] उनके इतिहास से यह भी मालूम होता है कि इसकी

---

[1] वही : पृ-165

[2] वही : पृ-166

[3] विपिन चन्द्र : पृ-253

योजना बहुत ही समझदारी से बनाई गयी यद्यपि शुरू में तो बहुत कम लोगों ने इसके महत्त्व को समझा था । महात्मा गाँधी को साबरमती आश्रम के अपने 78 सहयोगियों के साथ अहमदाबाद मुख्यालय से गुजरात के गाँवों में होते हुए 240 मील की यात्रा करनी थी । अपने समर्पित कार्यकर्ताओं के साथ हाथ में लाठी लेकर महात्मा गाँधी ने जब यह यात्रा शुरू की तो इस दृश्य में कुछ ऐसा जादू था कि लोगों का मन आंदोलित हो उठा । महात्मा गाँधी के आगे बढ़ने का समाचार अखबारों के जरिये देश के कोने-कोने तक पहुँचने लगा ।

इसके आगे का दृश्य विपिन चन्द्र ने उसी तरह बताया था जिस तरह उपन्यासकार ने 'मीरा और महात्मा' में दर्शाया है । दोनों के दृश्यों में कोई खास अंतर नहीं है ।

सुमित सरकार ने 'आधुनिक भारत' में देश के उन क्षेत्रों के विषय में अपने इतिहास में जानकारी दी है जहाँ समुद्र नहीं था । देश के कुछ हिस्सों में समुद्र न होने का कारण नमक कानून को तोड़ा नहीं जा सकता था । इसीलिए वहां के लोगों ने नमक आन्दोलन के समय में चौकीदारी कर आन्दोलन को सक्रिय बनाया । ये प्रदेश थे मुंगेर, भागलपुर और साख । पूर्वी भारत के जिलों में अदा किये जाने वाले कर में से एक हिस्सा चौकीदारों को जाता था, जो ब्रिटिश सरकार के मुखबीर और जमींदारों के पालतू भी थे । इस आन्दोलन को रोकने के लिए सरकार ने बिढ़पुर के राष्ट्रवादी आश्रम पर कब्ज़ा जमा लिया और विशाल रैली पर लाठियां बरसायीं । बंगाल में भी मानसून के कारण नमक आन्दोलन 'चौकीदारी' और 'यूनियन बोर्ड' आन्दोलन में तब्दील हो गया ।

इस प्रकार नमक आन्दोलन का जो जोश देश के पानी वाले अर्थात समुद्री प्रदेशों में था, उसने पहाड़ी और मैदानी क्षेत्रों में भी महात्मा गाँधी के अहिंसा और सत्य के चमत्कार को सक्रिय बना रखा था । दूर के प्रदेशों से जहां से लोग साबरमती नहीं पहुँच सकते थे अपने ही प्रदेशों से अहिंसा की मशाल को ब्रिटिश राज के अत्याचारों के खिलाफ रोशन किये हुए थे ।

नमक कानून तोड़ने के बाद सरकार के साथ समझौतों पर बात

नमक कानून तोड़ने के बाद महात्मा गाँधी को नौ महीने के लिए जेल में रखा गया । नवीन बताता है कि महात्मा गाँधी को वायसराय के साथ समझौता किये जाने के लिए रिहा किया गया था । इस समझौते में कहा गया था कि ब्रिटिश सरकार भारतीयों की स्वतंत्रता की मांग पर विचार करेगी । इसके लिए सम्मलेन लन्दन में किया जाना था कांग्रेस और महात्मा गाँधी को पहले से ही मालूम था कि इसका कोई सकारात्मक परिणाम नहीं निकल पायेगा ।

तत्कालीन दक्षिणपंथी नेता विन्सटिन चर्चिल भारत को किसी भी प्रकार की सामाजिक -आर्थिक छूट नहीं देना चाहते थे । 'इसके लिए दक्षिण पंथी दैनिक मेल ने घोषणा भी की थी कि " भारत में बिना ब्रितानी राष्ट्रमंडल के टुकड़े-टुकड़े हो जाएँगे। व्यवसायिक, राजनीतिक, भौगोलिक दृष्टि से यह हमारी शाही पूँजी था । इस पर अपनी पकड़ को ढीला कर देना सबसे बड़ा देशद्रोह होगा ।" '[1]

'मीरा एंड दी महात्मा' उपन्यास में लेखक ने बताया है कि यूरोप यात्रा के बीच मीरा और बापू ने दिसम्बर 1931 के शुरू में ही रोमां रोलां के विलेन्युएवे स्थित घर में पांच दिन का प्रवास भी किया था । इस मुलाकात का मीरा और बापू को बहुत इन्तज़ार था । इस सम्मेलन का तो कोई भी सकारात्मक परिणाम नहीं निकला । पर यूरोप से लौटने के बाद मीरा और महात्मा गाँधी सहित अन्य स्वराजियों को ब्रिटिश सरकार ने जेल में डाल दिया, इनमें मीरा और कस्तूरबा बा भी शामिल थीं । महात्मा गाँधी से प्रेम-संबंधों के कारण बा के मन में मीरा के लिए जो मनमुटाव था वह समाप्त हो गया ।

---

[1] विपिन चन्द्र : पृ-270

1936-1938

कुछ समय बाद महात्मा गाँधी को जेल से रिहाई मिल गयी थी । 1936-1938 के बीच महात्मा गाँधी सेवाग्राम आश्रम में ही रहे । नमक कानून तोड़ने के बाद महात्मा गाँधी ने "साबरमती आश्रम में तब तक न लौटने का संकल्प किया था जब तक कि देश को आज़ादी नहीं मिल जाती ।"[1]

जेल से रिहा होने के बाद बापू वर्धा के पास के सीगांव नामक गाँव में बने सेवाग्राम आश्रम में ही रहने लगे थे । मीरा को बापू ने उस आश्रम से दूर रहने के लिए कहा था क्योंकि मीरा के लिए उनके मन में जो प्रेम था वह उनके उद्देश्यों में बाधा बन रहा था । ब्रह्मचर्य के व्रत का पालन करने पर भी वे बार-बार कामातुर हो जाते थे अपने संकल्पों में आयी कमजोरी का कारण मीरा को ही मानते थे ।

एक तरफ जहाँ महात्मा गाँधी ने सेवाग्राम का आश्रम बनाया था वहीं दूसरी ओर साबरमती आश्रम से अब उन्होंने किनारा कर लिया था । सेवाग्राम एक छोटा-सा आश्रम था जिसे महात्मा गाँधी ने बा और अपने लिए बनाया था । लेकिन अब "यह भारतीय आज़ादी की लड़ाई का राजनैतिक केंद्र बन गया था ।"[2] थोड़े समय बाद जब बापू नियंत्रित महसूस करने लगे तो सेवाग्राम में भी दिनचर्या साबरमती जैसी ही चलने लगी थी ।

महात्मा गाँधी के लिए 1936 से 1938 तक की अवधि भावनात्मक उथल-पुथल की रही। उसका कारण था कि मीरा जिस प्रेम के लिए बार-बार महात्मा गाँधी से दूर जाने की कोशिश कर रही थी उसके लिए महात्मा गाँधी भी प्रयासरत थे । मीरा सीगांव से कुछ ही किलोमीटर दूर पास के गाँव में रहती थी "लेकिन महात्मा गाँधी के साथ संबंधों की अपनी भावनाओं पर उन्होंने फौलादी नियंत्रण रखा, अपने द्वारा उनकी लिखी पटकथा पर बिना शिकायत या विद्रोह के चलती रही ।"[3]

---

[1] वही : पृ-166

[2] वही : पृ-172

[3] वही : पृ-172

इस बीच महात्मा गाँधी को गहरे अवसाद और निराशा के दौर झेलने पड़े, जिसका कारण था अस्पृश्यता और हिन्दू-मुस्लिम टकरावों को खत्म करने के प्रयास में उनका विफल होना । धर्म और जाति के बीच की गहराई को पाटने के लिए महात्मा गाँधी वर्षों से प्रयास करते आ रहे थे । जिन्ना और मुस्लिम लीग के सांप्रदायिक क़दमों को देखकर भी रोक न पाने की असफलता के कारण ही गांधी जी परेशान थे । महात्मा गाँधी हर बार यही प्रयास करते की हिन्दू-मुस्लिमों को एक करके स्वाधीनता संघर्ष को सशक्त बनायें, लेकिन हर बार ब्रिटिश राज अपनी राजनीति खेलता ।

"इस बार ब्रिटिश सरकार को मौका भी मिल गया स्वदेशी आन्दोलन को कमजोर करने का क्योंकि 1936 में मुस्लिम नेता मुहम्मद अली जिन्ना भारत वापस लौट आये। पहले तो वे राष्ट्रवाद और स्वाधीनता तथा हिन्दू-मुस्लिम सहयोग के पक्ष में थे । उन्होंने एक ओर तो मुसलमानों को अलग से संगठित होने को कहा और दूसरी ओर यह भी कहा कि वे साबित कर दें कि उनकी देश भक्ति बेदाग़ है । इसके पीछे उनका **उद्देश्य** था मुस्लिम लीग के लिए ज्यादा से ज्यादा सीटें हासिल करना जिससे कि कांग्रेस को लखनऊ समझौते के लिए बाध्य कर सके। कांग्रेस द्वारा 1937 के चुनावों में हिस्सा लेने पर उसमें सिर्फ मुस्लिम मांगें ही शामिल की गयीं जैसे कि उर्दू भाषा लिपि की सुरक्षा और संरक्षण । लेकिन इन चुनावों के परिणाम काफी निराशाजनक रहे, इसलिए जिन्ना ने दूसरा रास्ता चुना । 1937-1938 के बीच उन्होंने घृणा पर आधारित साप्रदायिकता को यह कह कर बल दिया की 'इस्लाम खतरे में है' ।

<u>सेवाग्राम आश्रम से नवीन का जाना और पृथ्वी सिंह का आना</u>

जहाँ एक ओर सेवाग्राम में धीरे-धीरे लोगों की संख्या बढ़ती जा रही थी वहीं 1938 में पृथ्वी सिंह का सेवाग्राम के आश्रम में आगमन हुआ । पृथ्वी सिंह को सूत कताई सिखाने के लिए और उनके वीरता भरे संस्मरणों का अंग्रेजी में संपादन करने के लिए महात्मा

गाँधी ने मीरा का चुनाव किया । परिणामत: वर्षों से महात्मा गाँधी के उच्चतम मानदंडों पर चलने वाली मीरा पृथ्वी सिंह से प्रेम करने लगी ।

जब भी पृथ्वी अपनी यात्राओं के लिए बाहर रहते मीरा पत्र के माध्यम से उनसे जुड़ी रहती थी । मीरा ने जब गांधी जी के समक्ष पृथ्वी के लिए अपने प्रेम को स्वीकृत किया तो वे खुश हुए । अब महात्मा गाँधी चाहते थे कि मीरा पृथ्वी के साथ मिलकर देश के विकास में सहायता करे, क्योंकि उनकी दृष्टि में जिस तरह से पृथ्वी ने अपने क्रांतिकारी संस्मरणों का व्याख्यान किया था बापू की नज़र में एक सच्चा देश भक्त था । वे कहते हैं "अब मैं चाहूँगा की तुम पूरी तरह से पृथ्वी सिंह के मार्गदर्शन में काम करो "[1] इसके बाद महात्मा गाँधी ने मीरा को पृथ्वी के आश्रित छोड़ दिया, वे चाहते थे कि ये दोनों सच्चे देशभक्त मिलकर अपना जीवन देश की सेवा में अर्पित कर दें ।

लेकिन पृथ्वी की मंशा अलग थी उसके लिए मीरा केवल एक अंग्रेज़ महिला थी जिस पर भरोसा नहीं किया जा सकता था । इसके बाद पृथ्वी सिंह अचानक बर्मा चला गया और अपने जाने की सूचना मीरा को केवल एक पत्र के माध्यम से ही दी । अगले तीन वर्षों तक पृथ्वी नहीं लौटा । इन तीन वर्षों में मीरा परित्यक्ता प्रेमिका की तरह हरियाणा और पंजाब के उन विभिन्न स्थानों की यात्रा करती रहीं, जहाँ पर पृथ्वी रह चुके थे । यात्रा के बाद भी जब मीरा वापस लौटीं तो बहुत बोझिल महसूस करने लगीं। मानसिक पीड़ा और शारीरिक उलझन ने उनके मौन और ध्यान में भी खलल उत्पन्न किया । कुछ समय सेवाग्राम में रहने के बाद वहां रहना भी उनके लिए असंभव हो गया था, इसलिए अब मीरा सेवाग्राम आश्रम को छोड़ कांगड़ा जिले के चाय बागान में अकेले रहने चली गयीं।

---

[1] वही : पृ-191

इसके कुछ समय बाद नवीन ने स्वयं को उस काबिल न पाया जो कि सेवा जैसे सात्विक कामों के लिए अपना आजीवन न्यौछावर कर दे । इसलिए कुछ समय बाद बापू से इजाज़त ले वह आश्रम छोड़कर चला गया ।

द्वितीय विश्वयद्ध

पृथ्वी सिंह के आश्रम आने और नवीन के आश्रम से चले जाने के बीच में लेखक ने स्वाधीनता संग्राम की कोई घटना उपन्यास में नहीं दिखाई है । नवीन और पृथ्वी सिंह जब आश्रम छोड़ कर गये तो उस समय देश में स्थिति शांत थी, परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में हलचल मची हुई थी । द्वितीय विश्वयुद्ध 1 सितम्बर 1939 को शुरू हुआ जिस दिन नाजी जर्मनी ने पोलैंड पर हमला किया था । ब्रिटिश सरकार ने कांग्रेस से विचार विमर्श किये बिना ही यह घोषणा कर दी कि भारत का जर्मनी से युद्ध चल रहा है ।

विपिन चन्द्र ने इस घटना का विवरण इस प्रकार दिया है कि द्वितीय विश्वयुद्ध 1 सितम्बर 1939 को शुरू हुआ, यानी जिस दिन नाजी जर्मनी ने पोलैंड पर हमला किया । इसके पूर्व मार्च 1938 में वह ऑस्ट्रिया और मार्च 1939 में चेकोस्लोवाकिया पर कब्ज़ा कर चुका था। ब्रिटेन और फ्रांस, जो अभी तक हिटलर के प्रति तुष्टिवादी नीति अपनाए हुए थे, अब पोलैंड की मदद के लिए आगे आने और जर्मनी के विरूद्व युद्ध छेड़ देने के लिए बाध्य हो गये । 3 सितम्बर 1939 को उन्होंने यही किया । भारत सरकार ने केन्द्रीय विधायिका से विचार-विमर्श किये बिना घोषित कर दिया कि भारत का जर्मनी से युद्ध चल रहा है ।

"कांग्रेस की फ़ासीवादी हमले के शिकार लोगों से पूरी सहानुभूति थी और युद्ध छिड़ने पर उसकी तात्कालिक प्रतिक्रिया फ़ासीवादी विरोधी ताकतों का समर्थन करने की थी । महात्मा गाँधी ने वायसराय से कहा कि ब्रिटिश सरकार और वेस्टमिनिस्टर एबे

के संभावित विध्वंस की कल्पना से ही वे विचलित हो उठते हैं और वे ब्रिटेन तथा मित्र राष्ट्रों के उद्देश्य के पूरी तरह साथ हैं । लेकिन कांग्रेस के अधिकांश नेताओं का सवाल था कि एक गुलाम राष्ट्र दूसरे देश कि आज़ादी की लड़ाई में कैसे सहयोग कर सकता है ? इस विषय में कांग्रेस का मत क्या हो ये निश्चित करने के लिए 10 से 14 सितम्बर तक कांग्रेस कार्यसमिति कि बैठक वर्धा में हुई, जिसमें सुभाष चन्द्र बोस, आचार्य नरेन्द्रदेव और जयप्रकाश नारायण को भी आमंत्रित किया गया । बैठक में गहरे मतभेद हो गये । साम्राज्यवादियों और सुभाष चन्द्र बोस का तर्क था कि चूँकि यह साम्राज्यवादी युद्ध था और दोनों ही पक्ष अपने-अपने औपनिवेशिक स्वार्थों की रक्षा के लिए लड़ रहे थे, अत: किसी भी एक पक्ष का समर्थन नहीं किया जा सकता । कांग्रेस का वक्तव्य यह था कि वह स्थिति का फ़ायदा उठाये और तुरंत सविनय अवज्ञा आन्दोलन छेड़ दे।"[1]

'मीरा एंड दी महात्मा' उपन्यास में 1940 के पूर्वार्ध में ही गांधीजी से राष्ट्रीय मोर्चा सँभालने का आग्रह किया गया और इस बार वे मान गये । उन्होंने फैसला किया कि कुछ गिने चुने लोग ही इस सत्याग्रह में भाग लेंगे ।

जिस समय भारत में ये सब घटनाएं घट रही थीं, ठीक उसी समय मीरा अपने निजी जीवन को संभाल रही थी, वही मीरा जो अपना सर्वस्व भारत के स्वाधीनता संघर्ष में अर्पित करने आई थी, आज अपने ही जीवन में उलझी हुई थी । कुछ समय बाद ही पृथ्वी सिंह आश्रम लौटा तो मीरा ने उसे अपने प्रेम के बारे में बताने की कोशिश की लेकिन वह मीरा से दूरी बनाये रखता था । मीरा के प्रेम को पृथ्वी सिंह ने स्वीकृति नहीं दी और अंततः वह भी हमेशा के लिए आश्रम छोड़ कर चला गया । जब पृथ्वी सिंह चला गया तो मीरा ने उसे बहुत से पत्र लिखे मगर वह मीरा को हर पत्र के जवाब में यही कहता कि मीरा स्वयं को देशसेवा के लिए समर्पित कर दे । 1940-1942 के

---

[1] विपिन चन्द्र: पृ-431

बीच देश की राजनीति में जब संघर्ष अपने चरमोत्कर्ष पर था । पृथ्वी सिंह आश्रम को हमेशा के लिए छोड़ कर चला गया । मगर वैसा नहीं हुआ जैसा मीरा चाहती थीं । इसके बाद पृथ्वी की ओर से कोई जवाब भी नही आया ।

मानवीय भावनाओं के इस ज्वारभाटे में भी आज़ादी की मशाल प्रतिपल सुन्हरी होती जा रही थी । उसी वर्ष एक सद्भावना मंडल भारत आना था, जिसमें भारत को स्वतंत्रता देने के लिए एक परिषद का निर्माण किया गया था । विपिन चन्द्र ने इसके बारे में बताया है कि "1942 में ब्रिटेन के प्रधान मंत्री विन्स्टन चर्चिल ने कैबिनेट मंत्री स्टैफोर्ड क्रिप्स के नेतृत्व में एक सद्भावना मंडल 2 मार्च को भारत भेजा था । इसमें जितना जल्दी हो सके भारत को डोमिनियन स्टेट्स का दर्जा दिया जाना था । लेकिन इसकी एक शर्त थी जिसमें कि द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त होते ही भारत को डोमिनियन स्टेट्स यानी कि स्वतंत्र उपनिवेश का दर्जा दिया जाए । इसमें एक ऐसी संविधान निर्मात्री परिषद् बनाने का वादा था जिसमें कुछ सदस्य प्रांतीय विधायिकाओं द्वारा निर्वाचित होंगे और कुछ रियासतों का प्रतिनिधित्व करने के लिए शासकों द्वारा नामांकित होंगे ।"[1]

'मीरा एंड दी महात्मा' में लेखक ने विवरण दिया है कि भारत में अब समय आ गया था निर्णायक हमले का जिसे अगस्त क्रांति और भारत छोड़ो आन्दोलन के नाम से जाना जाता था । इस वर्ष सरकार का दमन भी कुछ अधिक हो गया था । क्रिप्स वापस लौट चुका था महात्मा गाँधी और नेहरु ने मिलकर यह फैसला किया कि अब भारत का भविष्य भारतीयों के हाथ से ही लिखा जायेगा । करो या मरो का नारा देते हुए महात्मा गाँधी ने कहा कि पूर्ण स्वराज से कम अब मैं किसी भी फैसले पर संतोष करने वाला नहीं हूँ, इसलिए स्वाधीनता संग्राम इसी क्षण शुरू होगा ।

---

[1] विपिन चन्द्र : पृ-437

करो या मरो की घोषणा महात्मा गाँधी ने 8 अगस्त 1942 की मध्य रात्रि को की थी "उन्होंने अपने भाषण में विभिन्न वर्गों को साफ़-साफ़ निर्देश दिए थे सरकारी कर्मचारी अपनी नौकरी न छोड़ें लेकिन कांग्रेस के प्रति अपनी निष्ठा की घोषणा कर दें। राजा-महाराजा जनता की प्रभुसत्ता स्वीकार करें और उनकी रियासतों में रहने वाली जनता अपने को राष्ट्र का अंग घोषित कर दे तथा राजाओं का नेतृत्व तभी मंजूर करे जब वे अपना भविष्य जनता के साथ जोड़ लें । छात्र पढ़ाई तभी छोडें जब आज़ादी हासिल होने पर अपने इस निर्णय पर दृढ़ रह सकें ।"[1]

उपन्यास में लेखक बताता है भारत छोड़ो आन्दोलन का तूफ़ान 9 अगस्त 1942 की सुबह शुरू हुआ जब ब्रिटिश सरकार ने कांग्रेस नेताओं की बड़ी संख्या में गिरफ्तारी शुरू की । इन नेताओं में गाँधी जी, जवाहरलाल नेहरु, मीरा ,महादेव भाई आदि सब बड़े-छोटे नेताओं गिरफ्तार कर किसी अज्ञात स्थान पर भेज दिया गया ।

इन बड़े नेताओं की गिरफ्तारी की खबर पूरे देश में आग की तरह फ़ैल गयी । परिणामत: वाराणसी, कानपुर, दिल्ली, पटना, बिहार, पंजाब, गुजरात, आदि प्रदेशों में विरोध प्रदर्शन तथा हडतालें हुईं । प्रेस, पत्र-पत्रिकाओं पर रोक, रेलगाड़ी, पुलिसथाने, डाकघर, कचहरियां ब्रिटिश सरकार की प्रतीक हर चीज को लोगों ने नष्ट कर दिया । देश में जगह-जगह भारत छोड़ो के नारे सुनायी पड़ने लगे ।

इसके बाद की कहानी को लेखक ने उपसंहार में 30 वर्ष बाद का दिखाया है जब मीरा बैडेन के पहाड़ी हिस्से में जंगल के किनारे छोटी-सी कुटिया में रहती थी । नवीन विएना में अपना सम्मलेन खत्म होने के बाद इन 30 वर्षो में पहली बार मीरा से मिलने जाता है । जहाँ पर उसका एक कुत्ता और हरिद्वार से लाया हुआ एक नौकर भी साथ रहता है । अपनी उम्र के इस दौर में मीरा प्रकृति के सान्निध्य में रहकर अपने जीवन की उस आध्यात्मिकता को पूर्णत: अनुभूत कर रही थी, जिसकी तलाश में वह बीदोवेन

---

[1] विपिन चन्द्र : पृ-441

के संगीत, सर्रे के जंगल और साबरमती आश्रम तक आ पहुंची थी । अंत में वे वहीं शरण लेती हैं जहाँ बीदोवेन ने जीवन के अंतिम क्षण बिताये थे ।

मानव रूप में ईश्वर को देखने के लिए इच्छुक उस महिला ने महात्मा गाँधी में ईश्वर को देखा । गाँधी नाम से मन्त्रमुग्ध होने वाले संसार में अनेकों हुए हैं । लेकिन महात्मा गाँधी के श्रीमुख से 'मेरी बेटी' का संबोधन सुनने का सौभाग्य केवल मीरा बेन को मिला ।

"महात्मा-मीरा बेन दोनों के बीच रही मित्रता को इस शताब्दी की 'महान दार्शनिक मित्रता' की संज्ञा देनी चाहिए" - लुई फिशर लिखते हैं ।[1]

इस प्रकार देश को स्वतंत्रता दिलाने के लिए सारा भारत एक जुट होकर प्रयास कर रहा था । जिसके अंतर्गत बहुत से **बुद्धिजीवीयों** ने अपने जीवन और खुशियों को बिना किसी बात की परवाह किये देश के स्वाधीनता संग्राम में समर्पित कर दिया । उपन्यास में वर्णित आन्दोलनों का नेतृत्व करने वाले एक मात्र क्षीण काय लेकिन मज़बूत मनोबल वाले पुरुष महात्मा गाँधी थे । देश की स्वतंत्रता उनके लिए प्राथमिक शर्त थी, जिसके लिए उन्होनें 'एकता', 'समता', 'न्याय' जैसे **सिद्धांतों** का व्यवहारिक पक्ष अपनाया । बापू ने न केवल राजनीती में ही, लोगों के निजी जीवन में आने वाली समस्याओं का भी समाधान किया और आवश्यकता पड़ने पर दिशा निर्देश भी किया ।

---

[1] एन. महालिंगम : पृ-130

द्वितीय अध्याय

अनुवाद की दृष्टि से मीरा और महात्मा : अंतर्वस्तु

द्वितीय अध्याय

सुधीर कक्कड़ द्वारा अंग्रेजी भाषा में रचित 'मीरा एंड दी महात्मा' का प्रथम संस्करण वर्ष 2004 में 'वाइकिंग पेंगुइन बुक्स इंडिया' से प्रकाशित हुआ। इसके हिन्दी अनुवाद का प्रकाशन अगले ही वर्ष 2005 में 'राजकमल प्रकाशन, दिल्ली' से हुआ। हिन्दी में अशोक कुमार द्वारा अनूदित इस उपन्यास का शीर्षक 'मीरा और महात्मा' है। विश्वप्रसिद्ध भारतीय मनोविश्लेषणवादी लेखक द्वारा रचित यह उनका सत्रहवां उपन्यास है। यह उनकी सर्वश्रेष्ठ रचनाओं में से एक है। 'मीरा एंड दी महात्मा' एक बहुमुखी उपन्यास होने के साथ-साथ एक अर्ध-काल्पनिक रचना है जिसे लेखक ने तथ्यात्मक और काल्पनिक घटनाओं के मेल से बनाया है। उपन्यास की भूमिका में लेखक कहते हैं 'इस कहानी रुपी इमारत के ईंट-पत्थर जीवन से उठाये गए हैं और गारा-सीमेंट है कल्पनाशीलता।[1]' मीरा और महत्मा के दुखदायक मगर अद्भुत रिश्ते को व्यक्त करने के लिए लेखक ने कल्पना का सहारा लिया है। 'मनोविश्लेषणवादी लेखक कहते हैं कि अपने ही उत्तरों की तलाश में उन्होनें इस उपन्यास की रचना की है। मीरा की इच्छा और महात्मा के अध्यात्म की ख़ोज के बीच उनके त्रासदी भरे रिश्ते के ऐतिहासिक मलबे में ये उत्तर कहीं दब चुके थे।'[2]

लेखक ने इस उपन्यास की रचना भारत में ब्रिटिश शासन की पृष्ठभूमि के आधार पर की है। 1925 के भारतीय स्वाधीनता संग्राम से कथा का आरम्भ होता है। जब गाँधी जी सक्रिय राजनीति से दूर साबरमती आश्रम में एक आदर्श समाज का

---

[1] मीरा और महात्मा, प्राक्कथन

[2] www.rediff.com/2005/news 'The psychoanalyst claims it is a novel he wrote in search of answers he himself was looking for. The answers were buried in the historical debris of a tragical relationship between her desire and the great man spiritual quest'.

निर्माण कर रहे थे । साबरमती आश्रम में रहने वाले पात्रों के निजी जीवन में घटने वाली घटनाओं से कथा के स्तंभ खड़े किये गए हैं । ब्रिटिशों से लोहा लेने के लिए गाँधी जी के सत्य के प्रयोगों को उपन्यास में शुरू से अंत तक लेखक ने महत्व दिया है । 'अहिंसा', 'ब्रह्मचर्य' और 'सादा जीवन' साबरमती आश्रम के महत्वपूर्ण तत्व हैं । यह उपन्यास रहस्य और ईश्वर प्राप्ति के लिए आध्यात्मिक मार्ग की अवधारणा पर आधारित होने के साथ ही प्रेम की विषयासक्ति और अध्यात्म के बीच संबंधों की जटिलता को भी दिखाता है । यह एक शिष्ट रचना है, जहाँ विषयासक्ति होते हुए भी ईश्वर प्राप्ति के मार्ग से अडिग न होने को महत्व दिया गया है । जिसमें एक 'शुद्ध', 'सात्विक', 'अहिंसात्मक जीवन' की ओर लोगों को अग्रसर करना ही बापू अपना धर्म मानते हैं। जिससे कि लोग अपने अन्दर व्याप्त शक्ति का सही उपयोग कर सकें ।

उपन्यास की केन्द्रीय पात्र मेडलिन है, जिसकी काल्पनिक जीवनी पर सम्पूर्ण कथा आधारित है । लेखक कहते हैं कि 'यह एक काल्पनिक जीवनी या दो लोगों मीरा और महात्मा का कल्पित जीवन चरित है । एक कथाकार है जो मेरा प्रतिनिधि है, क्योंकि उपन्यास को आगे बढ़ाने के लिए उस पर टिप्पणी करना आवश्यक होता है ।'[1] लन्दन में रहने वाली मेडलिन स्लेड ब्रिटिश नौसेना के उच्च एवं समर्पित अधिकारी की बेटी है । उपन्यास में ब्रिटिश सेना के लिए समर्पित उच्च अधिकारी की बेटी मेडलिन ने अपना सारा जीवन एक ऐसे भारतीय व्यक्ति की सेवा में बिताने का फैसला किया है, जिसे ब्रिटिश राज नापसंद करता है । भारत के पिता माने जाने वाले 'बापू' के नाम से प्रसिद्ध व्यक्ति 'महात्मा गाँधी' की सेवा में मेडलिन अपना सारा जीवन बिताना चाहती है । बापू के 'सिद्धांत', 'सत्य के प्रयोगों' और उनके 'आध्यात्मिक विचारों' से प्रभावित

[1] www.rediff.com/2005/news it's a fictional biography or biographical fiction of two people Mira and Gandhi ji. Then there is a narrator who is my proxy because in a novel you need forward and you need to comment on events.

हो मेडलिन भारत आती है। भारत आगमन से पहले मेडलिन ने लन्दन में अपनी सारी चीज़ों का त्याग कर दिया था। साथ ही साबरमती आश्रम के कठिन जीवन के लिए एक साल तक खुद को तैयार भी करती रही। लेखक इस बात को स्वयं स्वीकारता है कि मेडलिन भारत में गाँधी जी के लिए आयी क्योंकि वह उनकी ओर आकर्षित थी, भारत के लिए नहीं आयी। बचपन से ही मेडलिन का सम्बन्ध अपने जीवन के आस-पास की किसी आध्यात्मिक शक्ति से जुड़ जाता था, जिसे वह न तो कभी समझ पाती थी और न ही किसी को समझा पाती थी। उस अध्यात्म की तलाश ही मेडलिन को बापू के पास भारत तक ले आयी। 1925 में मेडलिन पहली बार भारत अकेले आयी। इससे पहले भी वे दो वर्षों तक अपने परिवार के साथ भारत में रह चुकी थी। इस बार वह भारत आयी क्योंकि उसने अपना सारा जीवन भारत के स्वाधीनता संग्राम में समर्पित करने का फैसला किया था। इतना ही नहीं मेडलिन बापू को अपना ईश्वर समझती थी और उनसे प्रेम भी करने लगी थी। बापू ने ही मेडलिन को 'मीरा' नाम दिया था। मेडलिन को अपने जीवन में तीन बार प्रेम हुआ। पहली बार लन्दन में अपनी उम्र के 21वें वर्ष में संगीतकार लेमंड से, दूसरी बार 33वें वर्ष में बापू से भारत में और 47वें वर्ष में तीसरी बार पृथ्वी सिंह से भारत में ही। स्वाधीनता संग्राम की पृष्ठभूमि पर रचा यह उपन्यास 1925-1930 और 1942 के राजनीतिक संघर्ष को और उससे प्रभावित होने वाली राजनीती का चित्रण करता है। उपन्यास के सभी पात्र राजनीती और भारत की स्थितियों में ही नहीं उलझे बल्कि अपने निजी जीवन से भी संघर्ष करते दिखते हैं। उपन्यास में आये सभी मुख्य पात्र मेडलिन, महात्मा, नवीन, पृथ्वी सिंह अपने-अपने जीवन में आने वाले संघर्ष से और स्थितियों से बार-बार समझौता करते और जूझते नज़र आते हैं। मेडलिन अपने जीवन में पहली बार जिससे प्रेम करती है उसे व्यक्त नहीं कर पाती, दूसरी बार बापू को सारा जीवन समर्पित कर भी वे उनके साथ नहीं रह पाती और अंत में पृथ्वीसिंह से प्रेम करने पर वह मीरा को अंग्रेज़ होने

के कारण नहीं स्वीकारता । मेडलिन अपने जीवन में घटने वाली हर एक घटना के लिए रोमांरोलां को पत्र लिखती रहती है मानो पत्र लिखना उसका कर्तव्य हो । मेडलिन के लिए वे मित्र भी हैं और आध्यात्मिक पिता भी जिन्होनें उसे बापू से परिचित करवाया । दूसरे मुख्य पात्र बापू हैं जो राजनीतिक बाध्यताओं के कारण मेडलिन को नहीं स्वीकार सकते , इतना ही नहीं वे स्वयं भी सदा असमंजस में रहते की मेडलिन की नजदीकी चाहते हैं या उससे दूरी बनाये रखना चाहते हैं । मेडलिन जितनी भी बार उनके पास आना चाहती है बापू उसे खुद से दूर कर देते हैं, फिर उसके लिए परेशान भी होते हैं । 20-21 वर्षीय कॉलेज छात्र नवीन अपनी उम्र के जिस दौर में है, उत्सुकतावश गाँधी जी के सिद्धांतों को परिवार के खिलाफ जाकर अपनाता है । फिर बाद में अपने ही फैसले पर अडिग न रहने के कारण आजीवन भर भटकता है । आश्रम में अपनाये जाने वाले 'ब्रह्मचर्य', 'सादा जीवन' और 'सात्विक खान-पान' का बार-बार उल्लंघन करता है । पृथ्वी सिंह की क्रांति और शक्ति के कुछ किस्से उसके संस्मरणों के आधार पर ही सामने आते हैं । संस्मरणों में आये वीरता के प्रसंगों को लेखक ने पृथ्वी सिंह की काल्पनिक घटनाएं भी कहा है । बा उपन्यास की गौण पात्र हैं, जो बापू के लिए अपना पत्नी धर्म निभाती है । पर मेडलिन के आने पर वे बापू की जाने वाली सेवा और अपने अधिकारों को उसके अधिकृत होते देख उससे ईर्ष्या करती हैं । इसके अलावा कुछ अन्य गौण पात्रों से भी लेखक ने छोटी-छोटी कथाओं को विस्तार दिया है जैसे महादेव भाई, भंसाली भाई, मेडलिन का तपस्या पर जाना आदि ।

किसी भी लेखक की रचना को अनूदित करने से पहले अनुवादक को लेखक की मनोभूमि तक पहुंचना होता है । लेखक को अधिकार होता है की वह अपने विचारों को स्वतंत्रता से लेखनीबद्ध कर सके । लेकिन यह अधिकार अनुवादक को नहीं होता । हर एक व्यक्ति की संवेदना भिन्न होती है, किसी भी चीज़ को देखने-परखने का नज़रिया हर व्यक्ति का अपना होता है । जो अंतर्वस्तु अंग्रजी में रचित 'मीरा एंड दी महात्मा'

की है, उसका अनुवादक ने अपनी चेतना और संवेदना के स्तर पर अनुकरण करने का पूरा प्रयास किया है। अनुवादक का कर्तव्य है कि लेखक के अंतर्मन की गहराइयों तक पहुँचकर उपन्यास की कथा को बाहर निकाले। 'पहले सहृदय पाठक के रूप में कृति को ग्रहण करना होता है और फिर ग्रहीत रूप की लक्ष्यभाषा में पुन: सर्जना करनी होती है। अनुवादक को कृति के अभिधार्थ में न अटककर उसके व्यंजनात्मक अर्थ और उसके माध्यम से ध्वनित पात्रों की मानसिकता तक पहुंचना होता है।' 'मीरा एंड दी महात्मा' की अंतर्वस्तु को अशोक कुमार ने पात्रों के निजी जीवन की घटनाओं, दु:ख, मानसिकता और संघर्ष को वास्तविकता के साथ उजागर किया है। उपन्यास की अंतर्वस्तु को तीन प्रमुख बिन्दुओं — प्रेम संबंधों की जटिलता, आत्म मूल्यांकन की प्रवृति तथा नियति के प्रश्न को केंद्र में रखकर अनूदित उपन्यास को समझने एवं विश्लेषण करने का प्रयास किया जायेगा।

<u>प्रेम संबंधों की जटिलता</u>

'मीरा और महात्मा' उपन्यास में प्रेम किसी स्वप्निल से बिम्ब में चित्रित न होकर यथार्थ और आदर्शों के धरातल पर सामने आया है। जिसमें मांसलता नहीं अपितु आतंरिक तनाव और संघर्ष है। कहीं तो प्रेम की स्वीकृति न होने पर घुटन है तो कहीं प्रेम स्वीकृति के बाद भी उसे न पाने के लिए आतंरिक द्वंद है। मेडलिन के जीवन काल में तीन बार प्रेम आया लेकिन कभी तो वह सामाजिक उत्तरदायित्व की आड़ में अधूरा रह गया और कभी व्यक्तिगत अस्वीकृति के कारण। उपन्यास में एक संपन्नवर्ग से सम्बन्ध रखने वाली मेडलिन का जीवन कृत्रिमता से भरा हुआ है।

21 वर्ष की अपरिपक्व उम्र में मेडलिन को 56 वर्षीय पुरुष फ्रेडरिक लेमंड से प्रेम होता है। जिसकी एक पत्नी और एक बेटी है। वह संगीत कार्यक्रम के लिए लन्दन आता है और पांच दिन वहीं रुकता है। जिसमें से चार दिन तक मेडलिन के साथ

अच्छा समय बिताता है, परिणामत: मेडलिन उसे प्रेम करने लगती है । मेडलिन इस प्रेम को अपने ही अन्दर रखती है। न तो वह इस प्रेम के लिए ही लेमंड से कुछ कहती है और न ही लेमंड को उसकी इन भावनाओं के बारे में कुछ पता है । इन चार दिनों में मेडलिन को ऐसी कोमल भावनाओं का एहसास अपने अन्दर होता है, जैसा पहले कभी नहीं हुआ था । जब लेमंड के वहां से जाने का समय आता है तो मेडलिन बहुत परेशान हो जाती है । उसके चले जाने पर मेडलिन को पहली बार प्रेम की उस पीड़ा की अनुभूति होती है जिससे वह अब तक अनजान थी । मेडलिन के लिए यह पीड़ा उसकी अन्य किसी परेशानी से अलग थी । उसके खच्चर का मर जाना या प्रथम विश्वयुद्ध में नरसंहार के विनाश को देख कर उनको जो दु:ख हुआ यह उससे बहुत अलग था। कथाकार कहता है-

मूल पाठ

'Unable to part from the places where his presence still lingered. She fought against her feelings for Lamond with the same intensity with which she had organized his concerts. She was fully aware that these feelings had no resolution, no natural evolution that led to a desired goal. (p-74)

अनूदित पाठ

उन जगहों से अलग होना उन्हें असह्य लगता था, जहाँ लेमंड की मौजूदगी का एहसास होता था । लेकिन उन्होनें लेमंड के प्रति अपनी भावनाओं से उसी गंभीरता और जूनून के साथ संघर्ष किया जिस जूनून से उन्होनें उनके संगीत कार्यक्रमों की तैयारी की थी । उन्हें पूरा एहसास था कि इन भावनाओं का कोई समाधान नहीं है। (पृ-63)

तुलना

1) पहले वाक्य के अनुवाद में इस भाव का लोप है कि जहां लेमंड मेडलिन के साथ गया था वहां पर 'अब भी उनके होने का एहसास उसे था ।' 2) लेमंड को भूलने की कोशिश करते हुए लेखक ने मेडलिन को मज़बूत युवती के रूप में दिखाया है, जो यह जानती है कि उसे जिस व्यक्ति से प्रेम हुआ है, उसे पाने की कोई गुंजाइश नहीं है । मेडलिन की यही स्थिति अनूदित अंश के पाठक तक भी बिना किसी बाधा के पहुंचती है । 3) 'intensity' के लिए शब्कोशीय अर्थ 'तेज़ी' या 'प्रबलता' को न रखकर अनुवादक ने 'जूनून' शब्द से इसे और अच्छी तरह संप्रेषित किया है ।

लन्दन से लेमंड के चले जाने के बाद मेडलिन का जीवन प्रेम के इस अधूरे प्रसंग के कारण दारुण बनता गया । उसके जीवन की अनुकूल परिस्थितियां अचानक अब प्रतिकूल हो चली थीं । मेडलिन उन लड़कियों में से नहीं थी जो अपने प्रेमी के विषय में विचार कर रात के समय बिस्तर पर लेट यौन भावनाओं से ग्रस्त हो जाती हैं । लेमंड के जाने के एक साल बाद तक भी मेडलिन लन्दन में ही अपने अधूरे प्रेम के कारण जूझती रही । माँ के कहने पर वह यूरोप यात्रा के लिए तो गयी लेकिन ऑस्ट्रिया से लौटने के बाद लन्दन में रहना उसके लिए फिर मुश्किल हो चला था । कथाकार के शब्दों में -

मूल पाठ

London soon began to gnaw at the feelings of serenity and composure Madeline had carried back from Austria, and she became restless again. (p-77)

अनूदित पाठ

"मेडलिन ऑस्ट्रिया से शांति की जिस अनुभूति के साथ लौटी थीं उसे लन्दन ने शीघ्र कुतरना शुरु कर दिया । उनकी बेचैनी फिर लौट आई ।" (पृ.-66)

तुलना

1) उपर्युक्त अनूदित अंश में मूल की ही तरह यह भाव स्पष्ट है की ऑस्ट्रिया से मेडलिन मानसिक शांति के साथ लन्दन वापस आयी थी, पर लन्दन ने वापस उस प्रेम पीड़ा में उसे धकेल दिया । 2) लेकिन इस अंश में जहाँ अनुवादक ने अपनी कला में शब्दकोशीय छाया को दिखाया है वहीं पर 'gnaw' का स्थानांतरण 'कुतरना' है । यह शब्द एक क्रियात्मक संज्ञा है और कुतरना का पर्याय किसी वस्तु के कटे हुए टुकड़े से होता है । इसकी जगह 'कुरेदना' अधिक सही रहता । 3) 'composure' के अनुवाद का लोप है, जिससे की मेडलिन के आत्मसंयम का भाव लुप्त है ।

ऑस्ट्रिया में ही मेडलिन, रोमारोंला से मिली जिन्होंने उसे गाँधी जी का परिचय दिया और उनकी हाल ही में प्रकाशित जीवनी भी पढ़ने को दी । गाँधी जी की जीवनी पढ़ने के बाद उनका आकर्षण बापू के लिए बढ़ता गया । मेडलिन अपना जीवन उनकी सेवा में समर्पित करना चाहती थी । जिसके लिए उसने शाकाहारी भोजन, उर्दू भाषा और सूत की कताई सीखी । मीरा जब 1925 में पहली बार भारत आयी तो उसका उद्देश्य भारत के लिए नहीं बापू के लिए भारत आना था । जहाज़ से बम्बई पहुँचने पर एक आगंतुक के आग्रह पर भी मेडलिन वहां नहीं रुकी। अहमदाबाद साबरमती आश्रम पहुंचकर भी मीरा ने एक व्यक्ति के हाथ-मुँह धोने के आग्रह को ठुकरा दिया और विनम्रता से कहा कि 'उन्हें सीधे बापू के पास ले जाया जाए ।'[1]

मेडलिन बापू को बहुत लम्बे समय से जानती थी । लन्दन में रहकर भी अखबारों से उनके बारे में मिलने वाली अच्छी खबर से खुश और बुरी खबर से दुखी हो जाती थी । भारत आने से पहले ही मेडलिन के मन में बापू के लिए आकर्षण था । इस आकर्षण ने उसे लेमंड को भूलने में सहायता की । उनके हृदय को जो समीपता और साथ पहले प्रेमी से नहीं मिला, उसी को मेडलिन बापू के साथ कायम करना चाहती थी । मेडलिन

---

[1] वही : पृ-29

की डायरी से मिला 28 नवम्बर, 1925 का एक पत्र कथाकार की इस बात की पुष्टि करता है । मेडलिन ने यह पत्र तब लिखा जब उसे आश्रम आये हुए एक महीना भी नहीं हुआ था । पत्र का एक अंश कथाकार ने इस प्रकार दिया है-

मूल पाठ

But, Bapu, I am English. You cannot know how difficult it has been for me to hold myself back, not to intrude on your privacy, when I long to be with you every single moment of the day. But one day it will happen, an inner voice tells me. (p-64)

अनूदित पाठ

"लेकिन बापू, मैं अंग्रेज़ हूँ । आप नहीं जान पाएंगे कि मुझे खुद को ज़ब्त करने में, आपकी निजी दुनिया में अतिक्रमण से खुद को रोकने में मुझे कितनी मुश्किल हुई है, जबकि मैं हर पल आपके साथ रहना चाहती हूँ । मेरी अंतरात्मा कहती है कि एक दिन ऐसा होगा । (पृ-54)

तुलना

उपर्युक्त अंश में मीरा बापू की निकटता पाने को लालायित है । (1)अंश में 'to hold myself back' का 'मुझे खुद को ज़ब्त करने में' का अनुवाद लेखक के मंतव्य को व्यक्त करने में समतुल्य है । जिसमें 'ज़ब्त' शब्द से मीरा के खुद को ज़बरन रोके रखने की कोशिश लक्ष्यभाषा में दिखती है । (2) 'to intrude on' का 'में अतिक्रमण से' अनुवाद कथ्य के प्रवाह को अत्यधिक प्रबल बना देता है, क्योंकि इससे पहले ही वाक्य ज़ब्त शब्द के प्रयोग को देखकर अतिक्रमण अर्थात किसी के जीवन में जबरदस्ती घुस जाने को व्यंजित करता है । (3) यहाँ 'unthinkingly' का लोप है, जिससे कि बापू उसे 'बिना विचार किये अपनाएंगे' का भाव लुप्त हो गया है । उपर्युक्त अनूदित कथ्य ब्रिटिश सभ्यता में स्त्री और पुरुष के प्रेम और प्रेम में आने वाले खुलेपन की और संकेत

करने में सफल है । जिसमें मीरा ब्रिटिश होने पर एक विवाहित भारतीय पुरुष के अन्तरंग जीवन से खुद को दूर रख पाने में कैसे स्व-नियंत्रण करती है, यह लक्षित होता है ।

1926 में बापू आश्रम में ही रहकर अपनी आत्मकथा लिखने में व्यस्त रहे जिसके लिए उन्होनें जनसभाओं, सम्मलेन और भाषण इत्यादि में जाने से भी मना कर दिया था । वर्ष में सिर्फ एक बार वे 10 दिनों के लिए गवर्नर के निमंत्रण पर बम्बई की बैठक में गए ।

बापू जब तक बम्बई में रहे मीरा उन्हें लगातार पत्र लिखती रही और वे खुद भी उसके पत्रों का जवाब देते रहे । पर जब वे वापस लौटे तो मीरा को उनके व्यवहार में आये परिवर्तन को पहचानने में देर न लगी । उनका व्यवहार मीरा के लिए ही नहीं बाकी लोगों के लिए भी बदल रहा था, स्वयं पर से वे नियंत्रण खोते जा रहे थे । कारण था युवावाथा में उनसे होने वाली गलतियों के लिए उनकी मानसिक प्रताड़ना । अक्सर वे उन गलतियों को याद कर क्रोधित हो उठते थे । समाज के लिए उनका जो उत्तरदायित्व था, मीरा का आकर्षण उन्हें उससे विचलित कर रहा था । वे जान चुके थी कि मीरा का आकर्षण उनके अनुशासन को तोड़ने की ताकत रखता है । इसलिए बापू ने मीरा को खुद से दूर भगवद्भक्ति आश्रम भेजने का फैसला किया। मीरा वहां बापू के बिना खुश नहीं थीं । रोलां को एक पत्र में मीरा ने लिखा है कि उनके हृदय से आवाज़ आती है - 'मीरा तुम्हें निष्कासित कर दिया गया, तुम योग्य नहीं पायी गई ।'[1]

मीरा ने बापू को अपने हृदय की बात तब कही जब वे रेवाड़ी आश्रम आये थे । बापू कुछ कहे बिना वहाँ से चले गए । कुछ दिनों बाद उसे बापू के दिल के भारी दौरे से बचने की खबर मिली, वह साबरमती जाना चाहती थी । लेकिन बापू का पत्र मिलने

---

[1] वही : पृ-120

पर रुक गयी । मीरा खुद को बापू की इस हालत का जिम्मेदार मानती है और रोला को पत्र में लिखती है कि -

मूल पाठ

My desperate need to be with him, which sometimes make me feel that I would wither away and slowly die in his absence, and my fear that my importuning presence not only disturbs him but can even make him physically sick.' (p-149)

अनूदित पाठ

उनके साथ रहने की अपनी हताशापूर्ण जरुरत से मुझे कभी-कभी महसूस होता है कि उनकी गैर मौजूदगी में मैं बिखर जाउंगी, धीमी मौत मर जाउंगी लेकिन मुझे यह डर भी सताता है की मेरी दुराग्रहपूर्ण उपस्थिति न केवल उन्हें परेशान करती है बल्कि उन्हें बीमार भी कर सकती है । (पृ-124)

तुलना

1) उपर्युक्त हिन्दी अंश में अनुवादक ने लेखक के अर्थ का उसी सहजता और सरलता से पुनःसृजन किया है, जिस तरह मूल में हुआ है । ऊपर के दो वाक्यों में उनके बिना मीरा स्वयं को असहाय पाती है, तो अगले दो वाक्यों में खुद को बापू की तबीयत के लिए जिम्मेदार मानती है । मीरा का यह अंर्तद्वंद्व और चाहकर भी बापू के पास न जा पाना लक्ष्यभाषा में अनूदित हुआ है । 2) 'मैं बिखर जाउंगी' जैसे पद में भावनात्मक अनुवाद प्रभावी बन पड़ा है । 3) 'दुराग्रहपूर्ण उपस्थिति' में मीरा की मनमानी करना भी अर्थपूर्ण है ।

मधुबनी जाने के कुछ दिनों बाद उन्हें एक बार फिर आश्रम में रहने का अवसर प्राप्त हुआ । क्योंकि बापू ने मीरा को पत्र में कहा था कि तुम अपने साथ हिंसा मत करो यदि मेरे पास आना चाहती हो तो आ जाओ । मीरा बापू के साथ जनसभाओं और

सम्मेलनों में जाने पर खुश थी, लेकिन एक शाम बापू की कुटिया में गयी तो उनके चरणों में बेहोश हो गिर पड़ी, उसके बाद क्या हुआ उसे कुछ याद नहीं । अगली सुबह बापू का एक पत्र मिला जिसमें उन्होनें लिखा -

मूल पाठ

This disease is idolatry. If it is not, why hanker after my company! Why touch or kiss the feet that must one day be dead cold? There is nothing in the body. The truth I present is before you. Experience and effort will unravel it before you, never my association in the manner you wish. When it comes in the course of business, you will, like others, gain from it more because of your devotion. Why so helplessly rely on me? (P-170)

अनूदित पाठ

"यह बीमारी है बुतपरस्ती । अगर ऐसा नहीं है तो मेरा साथ पाने की भूख क्यों? उस पैर को चूमना क्या, जो एक दिन ठंडा पड़ जाने वाला है । शरीर में कुछ भी नहीं है । मैं जिस सत्य का प्रतिनिधित्व करता हूँ वह तुम्हारे सामने है । अनुभव और प्रयास से यह सत्य तुम्हारे सामने प्रकट हो जायेगा, जिस तरह का मेरा साथ तुम चाहती हो उससे यह नहीं होगा । कामकाज के बीच जब यह तुम्हारे सामने प्रकट होगा तो तुम `दूसरों की तरह इससे ज्यादा से ज्यादा लाभ पाओगी, खासकर अपने श्रद्धा भाव के कारण फिर मुझ पर इतनी निर्भरता क्यों ? (पृ-139)

तुलना

1)अनुवाद के प्रथम वाक्य में 'भूख' शब्द मांसलता को लक्षित करता है, इसी जगह पर यदि 'लालायित' शब्द का प्रयोग होता तो मीरा की बापू के निकट रहने की इच्छा को अच्छी तरह अभिव्यक्ति मिलती । क्योंकि लालायित का अर्थ होता है 'अभिलाषा' मीरा

को बापू से कोई शरीरिक भूख नहीं थी । (2) 'अनुभव और प्रयास से यह सत्य तुम्हारे सामने प्रकट हो जायेगा' इसकी जगह 'अनुभव और प्रयास इसे तुम्हारे सामने प्रकट कर देंगे' ज्यादा ठीक रहता। लेखक का सन्देश है कि मीरा हमेशा बापू का साथ चाहती है और बापू पहले भी बहुत बार उसे समझा चुके थे कि उसका कर्तव्य बापू की देखभाल करना नहीं है, बल्कि बापू के उद्देश्यों में सहयोग करना है । मीरा की कमजोरी को देख बापू को उससे कोफ़्त भी होती है मगर वो भी उसका साथ चाहते हैं । अपनी राजनीतिक बाध्यता के कारण वे मीरा के साथ अपने संबंधों को बढ़ावा नहीं दे सकते हैं । अनूदित अंश यह सन्देश देने में सफल है ।

तीसरी बार मीरा के जीवन में संघर्ष तब आया जब उन्हें पृथ्वी सिंह से प्रेम हुआ । पृथ्वी सिंह एक क्रांतिकारी था जो बापू और मीरा की नज़रों में अपना जीवन देश सेवा के लिए अर्पित करना चाहता था मगर वास्तव में ऐसा नहीं था । मीरा उसके वीरता भरे किस्सों के कारण ही उस पर आकर्षित हुई थी । उसकी कायरता का पता तब चलता है जब वह मीरा के सच्चे प्रेम से भाग कर बर्मा चला जाता है । उसके दो वर्ष बाद लौटने पर जब मीरा उसके सामने विवाह का प्रस्ताव रखती है, तो वह कहता है 'हमें अगले जन्म तक इंतज़ार करना पड़ेगा ।'[1]

पृथ्वी सिंह के भावनगर चले जाने पर मीरा उसे एक पत्र भेजती है, जिसमें वह कहती है कि पृथ्वी से प्रेम करने पर उसने स्वयं को पा लिया है । इसलिए वह चाहती है कि दोनों साथ मिलकर देश सेवा करें । इस पर पृथ्वी का जवाब में यह लिखता है-

मूल पाठ

'My dear sister, Mira'.

Received yours. It has given me a great shock. In these stormy days the duty of every lover of India must be to work with a single-minded

---

[1] वही : पृ -202

devotion for the liberation of the country. I do not want any other thought upon my brain but the realization of the dreams of my life for which I have lived and suffered. Can't you appreciate the delicate situation in the country... " (p-254)

अनूदित पाठ

'मेरी प्रिय बहन मीरा'-

"तुम्हारा पत्र मिला, इसने मुझे गहरा सदमा पहुँचाया । इन तूफानी दिनों में भारत के हर एक प्रेमी को देश की आज़ादी के लिए पूरे समर्पण से काम करना चाहिए। मैं अपने जीवन के उन सपनों को सच करने के सिवा और कुछ सोचना नहीं चाहता जिनके लिए मैं जिया और कष्ट सहे । क्या तुम देश की नाज़ुक स्थिति को समझ नहीं सकतीं..." (पृ-204)

तुलना

1) उपर्युक्त अंग्रेजी अंश का अनुवाद अनुवादक ने अच्छा किया है । पृथ्वी सिंह का अपने **उद्देश्यों** पर अडिग रहना और मीरा को डांटना, दोनों ही भावों की तारतम्यता अनूदित अंश में स्पष्ट है । 2) 'मैं जिया और कष्ट सहे' पद में पृथ्वी के पिछले जीवन के संघर्ष का पता चलता है जिसे वह मीरा के प्रेम के कारण भूल नहीं सकता और अपने फैसले पर भी अडिग है ।

आत्म मूल्यांकन की प्रवृति

जब व्यक्ति आत्म विशलेषण करता है तो अपने मनोवेगों को रोक नहीं पाता है । भूतकाल में घटित घटनाएं जब वैयक्तिक चेतना का सहारा लेकर खड़ी होती हैं तो उनसे मुकाबला करने में व्यक्ति असहाय हो जाता है । यह आईने में अपना प्रतिबिम्ब निहारने जैसा ही है । अपने समस्त मनोवेगों को शिल्प और वास्तविकता के साथ बापू आत्म

कथा में लिख रहे थे । ज़ाहिर सी बात थी समकालीन काल में संत जैसा पूजनीय व्यक्ति पिछले जीवन में इतना पापी मन लेकर जीवन जीता था तो उसे सच्चाई के साथ व्यक्त करने में कोफ़्त ही होनी थी, जो स्वाभाविक भी था ।

उनका यह दार्शनिक और समष्टिगत चिंतन अनचाहे ही उन पर हावी होता जा रहा था। समाज कल्याण के जिस दायित्व का निर्वाह वे कर रहे थे, उसके लिए अपनी आत्मकथा में बापू ने आतंरिक द्वंद्वों और प्रेरणाओं का पूरी ईमानदारी से आत्मविश्लेषण किया । पिछले जीवन में की हुई गलतियों को वे सुधार तो नहीं सकते थे, मगर उसके लिए स्वयं को प्रताड़ित जरुर कर रहे थे । लेखन के दिनों में बापू अक्सर क्रोध से भर जाते थे । इस बीच बापू का व्यवहार भी बदल गया था । अपनी आत्मकथा में उन्होनें अपने यौन आकर्षणों और कमजोरियों के बारे में बताया है । मीरा ने जब उनकी गुजराती में लिखी आत्मकथा के बारे और उनकी विषयासक्ति के बारे में सुना तो वे बापू को इस आसक्ति वाले अंश को अंग्रेजी अनुवाद में न उभार कर लिखने का सुझाव देती है । लेकिन बापू इस सुझाव को तुरंत ख़ारिज करते हुए कहते हैं कि-

<u>मूल पाठ</u>

'No Mira,' he says, I was obsessed with sex in the early years of our marriage. I could think of nothing else. I could not leave Ba alone for a single moment after I came home from school. I would have become a physical and emotional wreck if she had not been away so often on frequent visits to her parents. "*Obsessed*" and "*Wreck*" are the right words.' (p-131)

<u>अनूदित पाठ</u>

"वे कहते हैं, 'नहीं मीरा, विवाह के प्रारंभिक वर्षों में मैं सेक्स के प्रति बुरी तरह आसक्त था । मैं कुछ और सोच नहीं पाता था । मैं स्कूल से आने के बाद बा को एक पल के

लिए भी नहीं छोड़ता था । अगर वे अक्सर अपने मायके नहीं जाया करतीं तो मैं शरीर और भावना से नष्ट-भ्रष्ट हो चुका होता । आसक्त और नष्ट-भ्रष्ट ही सही शब्द हैं । "

(पृ-109)

<u>तुलना</u>

1) उपर्युक्त अनूदित अंश बापू के मन से उभरे एक ऐसे सत्य को उजागर करने में सफल है जो बहुत लम्बे समय से उनके भीतर छुपा था और बाहर आने पर उन्हें मानसिक संतुष्टि देता है । उनकी विषयासक्ति को जो खुलापन अंग्रेजी पाठ में लेखक ने दिया है उसी स्वभाविकता से हिन्दी में भी सामने आया है । 2) 'मैं कुछ और सोच नहीं पाता था' की जगह यदि इस वाक्य का प्रयोग होता 'इसके अलावा मैं और कुछ नहीं सोच पाता था' तो विषयासक्ति पर जो उनका जोर है वह स्वभावत: व्यक्त होता । 2) 'home' शब्द के अनुवाद का लोप है । 3) 'अगर वे अक्सर अपने मायके नहीं जाया करतीं' अंग्रेजी में इस अनूदित अंश के लिए जो वाक्य लिखा है उसमें बा के नियमित मायके जाने की बात है, जबकि 'अक्सर' के प्रयोग से वह सन्देश नहीं मिल रहा है ।

वर्धा आश्रम से साबरमती वापस लौटी मीरा के मन में बापू के लिए शारीरिक आकर्षण बढ़ गया था । अपनी ऐसी भावनाओं को काबू में न रख पाने के कारण बापू ने उन्हें फटकारा। उन्होंने कहा कि यदि तुम मेरे शरीर की सेवा करना चाहती हो तो वह व्यर्थ है क्योंकि शरीर नश्वर है । यदि तुम मेरी आत्मा की सेवा करोगी जो इस देश में व्याप्त है, तो वही मेरी सेवा होगी । कुछ समय बाद बापू संयुक्त प्रान्त के दौरे पर चले गए । वहां जाकर उन्हें एहसास हुआ कि सिर्फ मीरा ही नहीं बल्कि वे भी उसके लिए उतने ही चिंतित हैं, यह चिंता उस सेविका के लिए नहीं थी बल्कि उस स्त्री लिए थी जिसे वे प्रेम करते हैं । समाज और राजनीती के लिए उनका जो उत्तरदायित्व था उसके

कारण वे अपने प्रेम को खुल कर स्वीकार नहीं कर सकते थे लेकिन फिर भी भावना वश उन्होंने मीरा को पत्र लिखा । वे लिखते हैं-

मूल पाठ

Now that you are away from me, my grief over having grieved you is greater. No tyrant has yet lived, who has not paid for the suffering he has caused. No lover has ever given pain without being more pained. Such is my state. What I have done was inevitable. Only I wish I did not lose my temper. (p-173)

अनूदित पाठ

"अब तुमसे दूर होने के कारण, तुम्हे दुःख पहुँचाने पर मेरा दुःख और बढ़ गया है । ऐसा कोई अत्याचारी नहीं होगा जिसे अपने अत्याचार की सज़ा न भुगतनी पड़ी हो । कोई भी प्रेमी दुःख देने के बाद खुद ज्यादा दुःख पाने से ना बच पाया होगा । मेरी हालत वैसी ही है । मैंने जो किया वह होना ही था । मैं बस यही सोचता हूँ कि मैंने क्रोध न किया होता । (पृ-141)

तुलना

1) 'मैंने जो किया वह होना ही था' वाक्य में अनुवादक ने लेखक के चरित्र में बदलाव कर दिया है । बापू यहाँ पर कहना चाहते हैं कि उन्होंने जो मीरा के साथ किया वह अनिवार्य था क्योंकि मीरा हर बार अपने **उद्देश्यों** से भटक जाती थी । अनूदित वाक्य में मीरा ने जो किया वह होना ही था, जो हुआ उसमें उसकी कोई भूमिका नहीं है, यहाँ पर लेखक के इस सन्देश को बाधित कर रहा है कि बापू ने जो किया वह मीरा को सही रास्ते पर लाने के लिए किया था, सब कुछ जानते हुए बापू ने ऐसा किया था । क्योंकि अगला वाक्य इसका सहपाठ बनकर उनके पछतावे को दिखा रहा है ।

मानव मन एक विशेष प्रकार की भूमि पर आधारित होती है । जब तक किसी व्यक्ति से ऊर्जा और प्रेम मिलता रहता है तब तक वह मन उसका रहता है । जब उसी मन को पहले वाले व्यक्ति से ज्यादा किसी और से अपने अनुसार प्रेम पाने की इच्छा जागृत हो जाती है, तो वह उसके साथ होना चाहता है । जिस व्यक्ति ने उन कमियों वाले मन को अपनाया वह उसे छोड़ किसी और के पीछे भागता है जो सिर्फ उसे भटकाता ही नहीं बल्कि स्वीकृत भी नहीं करता है ।

ऐसा ही मीरा के साथ भी हुआ जब तक वह बापू के साथ रही बापू ने उस मेडलिन को स्वीकारा जो लन्दन से आई थी । जो अंग्रेज़ होने पर भी भारतीय बनना चाहती थी, जिसमें बापू ने उनका साथ दिया । पर कुछ समय बाद वह बापू और अपने बीच के उस आध्यात्मिक सम्बन्ध को भूल जाती है और पृथ्वी सिंह से प्रेम करने लगती है । उसका मन उसे एक ऐसी विपरीत दिशा में ले जाता है जो उसका मार्गदर्शन नहीं करता अपितु उसे मार्ग से भटका देता है । मीरा सोचती है कि बापू के सान्निध्य में रहकर उसने अपने स्व को खो दिया है । वह सिर्फ वही करती थी जो बापू उसे करने को कहते थे । पृथ्वी सिंह से मिलने के बाद वह यह भी भूल गयी कि वह किस उद्देश्य से भारत आई थी, और यह उसका स्वयं लिया हुआ फैसला था । पृथ्वी से मिलकर उसे लगता है कि उसने खुद को पा लिया है, पृथ्वी की उपस्थिति में उसे नया जीवन मिला है । वह एक पत्र में उसे लिखकर भेजती है -

मूल पाठ

But it is also undermined my self-reliance and self-expression, and I became incapable of doing any sustained or independent work. Before I came to Bapu I was a person of free energy, enterprise and self-reliance. All this I somehow lost. Only when you came into my life did my natural strength reawaken. (p-251)

अनूदित पाठ

"लेकिन इसने मेरी आत्मनिर्भरता और आत्माभिव्यक्ति को भी कमज़ोर किया और मैं सतत या स्वतंत्र काम करने में अक्षम हो गयी। बापू के पास आने से पहले मैं स्वतंत्र ऊर्जा, उद्यम और स्वावलंबी वाली व्यक्ति थी। यह सब मैंने खो दिया जब आप आये तभी मेरी स्वाभाविक शक्ति जगी।" (पृ-202)

तुलना

1) पृथ्वी से प्रेम करने पर मीरा उसे बताती है कि बापू के प्रेम में तो उसने खुद को लीन कर दिया था, लेकिन उससे मिलकर उसने स्व को पा लिया है। लेखक यहाँ मीरा के चरित्र में आये जिस बदलाव को दिखाना चाहता है वह लक्ष्यभाषा में अनूदित हुआ है। 2) तीसरे वाक्य में 'उद्यम' की जगह 'साहसी' शब्द का प्रयोग मीरा के गुण को ठीक तरह से व्यक्त कर पाता 3) 'स्वावलंबी वाली व्यक्ति थी' की जगह अगर अनुवादक सिर्फ 'स्वावलंबी थी' लिखता तो ज्यादा सही रहता। 4) अंग्रेजी अंश में एक शब्द दो बार आया है 'self-reliance' जिसके लिये अनुवादक ने पहले 'आत्मनिर्भर' और दूसरी बार 'स्वावलंबी' शब्द का प्रयोग अनुवादक के शब्द कौशल का परिचय देता है।

मीरा की आत्मकथा लिखते हुए नवीन जब स्वयं का मूल्यांकन 50 साल बाद करता है तो अपने लिए वह यही सोचता है कि जीवन में उसने जो फैसला किया उस पर अमल न कर पाने का उसे दुःख तो नहीं है और न ही सुख है। लेकिन इतने सालों बाद भी एक अन्यमनस्कता उसके अन्दर बनी रहती है। ऐसी ही क्षणिक अनुभूतियां थीं जो कभी तो नवीन को इस पार उतार देती थीं और कभी उस पार। इसे परिपक्व दृष्टिकोण की कमी नहीं कह सकते। यह एक अंतरबाह्य छटपटाहट है जो नवीन को न तो उस फैसले में खुश रहने देती है जो उसने परिवार के खिलाफ जाकर लिया था और न ही उसमें जो वह स्वयं कर रहा था। बापू में उसकी निष्ठा उसे साबरमती तो ले आई थी। लेकिन उसकी नितांत निजी चेतना उसे बार-बार उच्च मध्यवर्गीय जीवन

की ओर खींच रही थी। जो उसके सादे जीवन और ब्रह्मचर्य के व्रत पर हावी हो जाता था।

जब नवीन आश्रम से बाहर रहा तो वह प्रेमचंद के साथ अपने साहित्यिक जीवन में खुश रहने लगा। जिसमें कि उसको खुद भी याद नहीं की बेखयाली में उसने कितनी बार अपने व्रत का उल्लंघन किया। नमक आन्दोलन के बाद वह एक हफ्ता साबरमती में रुका। वह भी इसलिए क्योंकि अब भी नवीन फैसला नहीं कर पा रहा था कि क्या साहित्यिक जीवन उसे आत्म संतुष्टि दे रहा है या वो जीवन जो बापू के साथ था वह सही था। नवीन के शब्दों से पता चलता है कि उसने यह उपन्यास 50 वर्ष बाद लिखा था और अब भी वह दुविधा में था। कथाकार लिखता है -

मूल पाठ

Yes, I chose to seek pleasure, however balance and sensible my pursuit might have been. I did not orient my life towards the possibility of a transcendence of my physical being, move towards that wonderful silent space free of unending din of I, me and mine where happiness is not a goal, where questions of pleasant and pain are irrelevant. I was a callow youth then, but I have not become better with age. (p-207)

अनूदित पाठ

"हाँ, मैंने आनंद को चुना, भले ही मेरे क्रियाकलाप संतुलित और समझदारी भरे थे। मैंने अपने जीवन को स्व के परे ले जाने की सम्भावना; मैं, मुझे और मेरा के अनवरत द्वंद्व से दूर अनूठे नीरव स्थिति की ओर ले जाने की सम्भावना की ओर नहीं मोड़ा था, जहाँ आनंद और पीड़ा अप्रासंगिक हो जाती है। मैं तब एक अनुभवहीन युवक था लेकिन उम्र के साथ मैं बहुत बेहतर नहीं हो गया हूँ।" (पृ-167)

तुलना

उपर्युक्त अनूदित अंश में अनुवादक जो कहना चाहता है वह लेखक के सन्देश को उलझा रहा है। एक दो वाक्यों को छोड़ कर बीच के 3-4 वाक्य हिन्दी के वाक्यविन्यास के जैसे नहीं बल्कि अंग्रेजी ढंग से ही अनूदित कर दिए गए हैं।

इसे इस प्रकार भी लिखा जा सकता था -

उपर्युक्त अंग्रेजी अंश का प्रस्तावित पाठ

"हाँ मैंने आनंद को ही पाना चाहा, चाहे मेरी तलाश जितनी भी संतुलित और समझदारी भरी रही हो। मैं कभी भी अपने जीवन को अपने भौतिक अस्तित्व से ऊपर उठने की सम्भावना की ओर मैं, मुझे, मेरा के अंतहीन कोलाहल से मुक्त उस अनोखे नीरव अवकाश की ओर नहीं ले जा पाया जहाँ आनंद लक्ष्य नहीं होता, जहाँ सुख और पीड़ा के प्रश्न का कोई हल नहीं होता। मैं तब एक अनुभवहीन युवक था लेकिन उम्र के साथ अब भी मैं बेहतर नहीं हो गया हूँ।

नियति का प्रश्न

नियति किसी भी व्यक्ति के जीवन की एक ऐसी कड़ी है जिससे वह चाहकर भी अलग नहीं हो सकता है। व्यक्ति चाहे जितनी भी कोशिश कर ले उसके साथ होता वही है, जो होना होता है। नियति के ऐसे ही खेल को लेखक सुधीर कक्कड़ ने 'मीरा एंड दी महत्मा' के चरित्रों के साथ खेलते हुए दिखाया है। जिसमें वे अपने आगे आने वाली परिस्थितियों के सामने झुकते जाते हैं। अपनी विपरीत परिस्थितियों से लड़ने की ताकत उनमें शेष नहीं रह गयी है।

'मीरा एंड दी महात्मा 'में लेखक ने पात्रों की नियति को उनकी इच्छा के अनुसार नहीं दिखाया है। उपन्यास में पात्रों की नियति उन्हें उनकी इच्छाओं के **विरूद्व** ले जाती है। बार-बार वे जिस स्वप्निल जीवन को ढूंढते हुए एक जगह से दूसरी जगह पलायन

करते हैं, वह उन्हें कहीं भी नहीं मिलता है । नियति उन्हें जहाँ भी ले जाती है वहां उन्हें जाना ही पड़ता है, उसके आगे सभी प्रयास बेकार हो जाते हैं । 'एकाकीपन', 'निराशा', 'कुंठा' एक अनागत से भविष्य की ओर उन्हें धकेलते हैं । सभी चरित्रों के निजी जीवन में स्थिरता की कमी दिखती है । उपन्यास की कथा बापू के नैतिक मानदंडों को आधार बनाकर रची गयी है । यद्यपि उपन्यास में आने वाले पात्र बापू के उन नैतिक मानदंडों का पालन करना चाहते हैं मगर नियति उनका साथ नहीं देती है ।

मेडलिन को अपने जीवन में पहली बार प्रेम हुआ तो वह उसे प्राप्त नहीं कर सकती थी। उसकी यादों से छुटकारा पाने के लिए जब वह यूरोप जाती है । तो, वहीं उसे उसके भावी जीवन में आने वाले प्रेम का परिचय रोमारोलां मिलता है, 'महात्मा गाँधी' । उनकी जीवनी पढ़ उनके सिद्धांतों से प्रभावित हो वह भारत आती है । गाँधी जी के साथ रहने पर भी उसे बार-बार उनसे दूर जाना पड़ता है । जितनी भी बार उसे बापू के साथ रहने का मौका मिलता है, नियति उसे दूर कर कभी तो वर्धा आश्रम, कभी रेवाड़ी और कभी मधुबनी भेज देती है । एक बार जब बापू सेवा ग्राम आश्रम में रहने आये तो मीरा को लगा कि अब उसे वह अवसर मिल मिल ही गया है जब वह बापू के साथ रहना चाहती थी । लेकिन उनकी नियति ने एक बार फिर उन पर वज्रपात किया । कथाकार कहता है 'गाँधी जी अड़ गए कि वे मीरा के गाँव में तभी रहेंगे जब मीरा पड़ोस के गाँव में चली जाएगी ।'[1] मीरा की डायरी के अंश से उनके मानसिक दुःख का पता चलता है ।

मूल पाठ

'this nearly broke my heart, but somehow I managed to carry on, and when Bapu finally decided to come and live in Seagaon, I buried my

---

[1] वही : पृ-172

sorrow in the joy of preparing him at his cottage and cowshed. ' (p-214)

अनूदित पाठ

"इसने मेरा दिल ही तोड़ दिया लेकिन मैंने इसे किसी तरह निबाहा और जब बापू ने सीगांव आकर रहने का फैसला किया तो मैंने अपने दुःख को उनके लिए कुटिया और गाय की झोंपड़ी तैयार करने की ख़ुशी में दबा दिया ।" (पृ-172)

तुलना

1) प्रथम वाक्य में अनुवादक ने 'निबाहा' शब्द का प्रयोग किया है, जो मीरा के अपनी नियति के साथ समझौता करने के भाव को दिखा रहा है । एक बार फिर बापू से दूर हो जाने का दुःख मीरा को भुगतना था, जिसके लिए वह कुछ नहीं कर सकती थी । एक सेविका की तरह उनकी कुटिया तैयार करने में ही मीरा ने खुद को खुश करने का मार्ग ढूंढ लिया था । लक्ष्यभाषा में यह सन्देश आसानी से पहुँच पाया है ।

वरोड़ा गाँव में रह रही मीरा के बार-बार बीमार पड़ने पर बापू ने उन्हें वापस सेवाग्राम आश्रम में बुला लिया । जब मीरा बापू के साथ रहकर खुश थी तो एक बार फिर उसके जीवन में दुःख दस्तक देने के लिए तैयार खड़ा था । पृथ्वी सिंह का आगमन आश्रम में हुआ बापू ने मीरा को पृथ्वी को कताई-बुनाई सिखाने का काम सौंपा । साथ ही उनके संस्मरणों को अंग्रेजी में सम्पादित करने का भी । पृथ्वी के वीरता भरे किस्सों को सुनकर मीरा उनकी ओर आकर्षित हो गयी । जब पृथ्वी यात्रा के लिए आश्रम से बाहर होता तो मीरा उन्हें पत्र लिखती; मीरा पृथ्वी की और आकर्षित ही नहीं हुई थी अपितु उससे प्रेम भी करने लगी थी । जब-जब वे छोटी यात्राओं पर बाहर जाते मीरा पृथ्वी सिंह को पत्र भेजती । मीरा के एक पत्र का मसौदा इस प्रकार है -

मूल पाठ

A week is over but instead of your coming back, I have only received one letter... I won't say anything more than this: don't stay away too long... My hut is more than half-done. You will have a corner there. (p-236)

अनूदित पाठ

"एक सप्ताह बीत चुके हैं और आपकी वापसी की जगह मुझे केवल एक पत्र प्राप्त हुआ है...इससे ज्यादा मैं कुछ नहीं कहूँगी । ज्यादा दिन दूर मत रहे मेरी कुटिया आधी से ज्यादा बन चुकी है। उसमें एक कोना आपका भी होगा..." (पृ-190)

तुलना

1) मीरा पृथ्वी से प्रेम करने लगी है और चाहती है कि जब वह वापस आये तो मीरा के साथ उसकी ही कुटिया में रहे । एक 20-21 वर्षीय प्रेमिका की तरह मीरा पृथ्वी को पत्र लिखती है और उसके आने के लिए बेचैन भी है । मीरा के इस पत्र के अंश में एक नवयौवना प्रेमिका का जो रूप लेखक ने दिखाया है, उसे अनुवादक भी सफलता के साथ दिखा पाया है ।

लेकिन यह मीरा के जीवन का दुर्भाग्य था कि इस बार भी उसने जिससे प्रेम किया उसके लिए मीरा की इन भावनाओं का कोई महत्व नहीं था । पृथ्वी सिंह अपनी वीरता के झूठे किस्से सुनाकर औरतों को अपनी ओर आकर्षित करने की कला जानता था । उसकी इस कला का प्रयोग आश्रम में ना करने के लिए बापू ने उसे पहली ही सचेत किया था । लेकिन उसके काल्पनिक वीरतापूर्ण किस्सों को सुनकर मीरा भी उन में फंस गयी ।

मीरा ने बापू के समक्ष पृथ्वी के लिए अपने प्रेम को स्वीकृत किया । पर बापू अब तक यह नहीं जानते थे की पृथ्वी के हृदय में मीरा के लिए भावनाएं हैं या नहीं ?

बापू उस पर मीरा से विवाह का जोर न डालें इसलिए वह झूठा बहाना बनाकर दो वर्षों के लिए बर्मा चला गया । वह मीरा के प्रेम को छल समझता था उसके प्रेम को स्वीकार न करने का कारण नवीन को पृथ्वी सिंह के संस्मरणों से पता चलता है । कथाकार के शब्दों में इस प्रकार है-

मूल पाठ

My brain refused to believe that any English person could be loyal, Honest, Devoted and truthful. I had forgotten the nuts of deceit spun by British in India. I had not forgotten their betrayals of trust and their atrocities. How could I then trust an English lady to be truthful? . . . I had lost faith in the English race. (p-240)

अनूदित पाठ

"मेरा दिमाग यह विश्वास करने को तैयार नहीं था कि कोई अँगरेज़ निष्ठावान, ईमानदार, समर्पित और सच्चा हो सका है । अंग्रेजों ने कपट का जो जाल भारत में बिछाया उसे मैं भूल नहीं पाया हूँ । इसलिए मैं कैसे विश्वास कर सकता था कि अँगरेज़ महिला अच्छी हो सकती है...अंग्रेजों की नस्ल पर से मेरा भरोसा उठ गया था ।" (पृ-193)

तुलना

1) उपर्युक्त अंश में (1)प्रथम वाक्य का अंत 'सका है' पर हुआ है जो पृथ्वी के इस विचार की पुष्टि करता है कि अब तक उसने ऐसा कोई भी अंग्रेज़ नहीं देखा था जो विश्वासपात्र हो । (2) 'I had not forgotten their betrayals of trust and their atrocities' वाक्य के अनुवाद का लोप है । पृथ्वी के मन में अंग्रजों के अत्याचारों और भारत को गुलामी की बेड़ियों में जकड़े रखने के कारण नफरत का भाव था । जिस मानसिक प्रताड़ना और अत्याचार का परिचय कथाकार को उसके संस्मरणों से भी

मिलता है और जिसके कारण वह मीरा के सच्चे प्रेम पर विश्वास नहीं कर सकता था, वह अनूदित अंश में सफलता से व्यक्त हुआ है।

नवीन की नियति -

नवीन अपने परिवार की इच्छाओं के **विरूद्व** जाकर बापू के आश्रम में रहने चला जाता है। उनके **सिद्धांतों** पर अमल करना ही अपने जीवन का **उद्देश्यों** समझता है। एक रात नींद में उससे अनैतिक भावनाओं के आवेग में ब्रह्मचर्य का व्रत टूट जाता है, वह जिन यौन भावनाओं से ग्रस्त हुआ उसके लिए क्षमाप्रार्थी है, बापू से माफी भी मांगता है। बापू उसे माफ़ कर देते हैं और उसे यह भी समझाते हैं कि अपनी गलती का प्रायश्चित करने के लिए आश्रम छोड़ने की कोई आवश्यकता नहीं है, लेकिन वह नहीं मानता और तीन महीने के लिये बाहर चला जाता है।

आश्रम से बाहर निकलने पर उसे यह नहीं पता था कि वह क्या करके अपनी गलती का प्रयाश्चित करेगा। नियति उसे एक बार फिर उसी जीवन की ओर ले जाती है जिसे बहुत पहले ही वह पीछे छोड़ चुका था। नवीन अगले तीन महीनों के लिए आश्रम से बाहर गया था, लेकिन नौ साल बाद बापू के पास फिर वापस लौट आया। इस बीच नवीन उन्ही चीज़ों में संलिप्त हो गया जिसे त्याग कर वह आगे बढ़ा था। नवीन कहता है 'घर में भोजन के समय जब चटखारेदार रस में मुस्लिम विधि से बना मांस पिताजी को परोसा जाता तो मेरे मुंह में लार भर आती।'[1]

नवीन आश्रम के जीवन को भूलगया और देश सेवा का जो फैसला उसने किया था उसे छोड़ कर प्रेमचंद के साथ साहित्यिक काम में संलग्न हो गया। इसके लिए उसने बापू को सूचना देना ठीक समझा। नवीन लिखता है -

---

[1] वही : पृ-148

मूल पाठ

I told him of my wish to stay on in Lucknow and pursue a literary carrier under the Premchand's tutelage. I also wrote that I was translating the Gujrati and English songs sung in the ashram's prayer meetings into Hindi, (p-186)

अनूदित पाठ

मैंने उन्हें लखनऊ में रहकर प्रेमचंद के शिष्यत्व में साहित्यिक करियर चलाने की अपनी इच्छा के बारे में बताया। मैंने उन्हें यह भी लिखा कि मैं आश्रम में प्रार्थना सभा में गाये जाने वाले गुजराती और अंग्रेजी भजनों का हिन्दी अनुवाद कर रहा हूँ। (पृ-151)

तुलना

1) 'tutelage' के लिए अनुवादक ने शब्दकोश में उपलब्ध 'अध्यापन' शब्द का प्रयोग न कर 'शिष्यत्व' का प्रयोग किया है जो संदर्भानुसार उपयुक्त है। 2) मूल अंगेज़ी पाठ में नवीन का एक संकेतित चित्र उभर रहा है। जो बापू को इस बात की सूचना देने के लिये पत्र नहीं लिखता कि वह क्या कर रहा है, अपितु इस पत्र की आड़ में परोक्षत: उसे एक आर्थिक सहायता की आवश्यकता है। मूल पाठ में आने वाले नवीन के आतंरिक भाव अनूदित अंश में भी आये हैं।

नवीन की नियति उसे आश्रम से बहुत दूर साहित्य के क्षेत्र में ले गयी, जिसने उसे आश्रम में लिए हुए सारे संकल्पों को भुलवा दिया। देश की सेवा में अब उसकी कोई रूचि नहीं थी। वह बापू को पत्र सिर्फ तभी लिखता जब उसे कोई सलाह लेनी होती या वह किसी मुसीबत में फंसता। मुसीबत का समय भी उससे ज्यादा दूर नहीं था, 1936 में प्रेमचंद का निधन हो गया। इसके बाद के तीन वर्ष नवीन के जीवन के सबसे बुरे दिन थे। वही नवीन जो कुछ समय पहले तक अपने जीवन से संतुष्ट था, कहता है-

मूल पाठ

Each day seemed cruelly elongated and even its end did not bring relief since the night, swathed in hours of sleeplessness, was not much better. But more insidious than the pervasive pointlessness were the attacks of self-loathing. (p-208-209)

अनूदित पाठ

'हर एक दिन क्रूर ढंग से लम्बा खिंचा हुआ लगता और उसका अंत भी राहत नहीं देता क्योंकि रातें भी अनिद्रा के कारण कोई बेहतर नहीं रहतीं । लेकिन गहरी निरर्थकता के बोध से ज्यादा घातक थे आत्म-घृणा के दौरे ।' (पृ-168)

तुलना

1) अनुवादक ने प्रथम वाक्य को अंग्रेज़ी के समान ही लम्बा बना दिया है, जिससे कि नवीन की जिस परेशानी को लेखक बताना चाहता है, वह नहीं उभरा है । 2) 'self-loathing' शब्द के लिए अनुवादक ने 'आत्म घृणा' शब्द का उपयुक्त प्रयोग किया है । 3) 'pervasive' शब्द के लिए अनुवादक ने शब्दकोश में उपलब्ध 'व्यापक' और 'फैलती हुई' शब्द का प्रयोग न कर 'गहराई' शब्द से नवीन की परेशानी को सही शब्दों में व्यक्त किया है । 4) 'swathed in hours of' के अनुवाद का लोप है । अनुवादक नवीन के मन में घंटों तक चलने वाली परेशानी को लक्ष्यभाषा में पुन:सृजित नहीं कर पाया है ।

आश्रम छोड़ने के अगले नौ वर्षों तक नवीन साहित्य और कला से यह सोच कर जुड़ा रहा कि शायद यही वह रास्ता है जो उसके जीवन का उद्देश्य सफल करता है । मगर जीवन की ठोकर उसे तब लगी जब आर्थिक समस्याएं उसका पीछा करने लगीं । उसके अन्दर इनसे लड़ने की ताकत खत्म हो गयी । अपने जीवन के डूबती नाव को पार लगाने में असमर्थ नवीन दयनीय स्थिति से लड़ने में खुद को असमर्थ देख बापू

को पत्र लिखता है । जैसे कि लोग अपनी परेशानियों में मंदिर जाते हैं वह भी इस बुरे वक्त में बापू के पास जाना चाहता है । बापू से आश्रम में आने की इजाज़त मिलने पर वह सेवा ग्राम चला जाता है । ऐसी दयनीय स्थिति उसे वापस बापू के पास आश्रम ले जाती है, लेकिन आने से पहले बापू उसे आगाह कर देते हैं कि उसमें सेवा की भावना नहीं है । नवीन कहता है, कुछ दिनों बाद वही हुआ बापू को यह महसूस हुआ कि मैं अपने स्वभाव को जबरदस्ती बदलना चाहता हूँ । उन्होनें कहा -

मूल पाठ

'Never do violence to your nature', he told me. 'If you forcibly cut off a part of yourself, at sometimes or the other it will take revenge. It will come back to haunt you like a ghost, demanding to live the unfilled part of its life. Go back to Lucknow, marry, have children and serve the country as you can. I release you from all your vows. ' (p-248)

अनूदित पाठ

"अपनी प्रकृति के साथ हिंसा मत करो । अगर तुम अपने एक हिस्से को अपने से ज़बरदस्ती भी काटते हो तो वह तुमसे बदला लेगा । यह प्रेत की तरह तुम्हारा पीछा करेगा और जीवन के अपूर्ण हिस्से को जीने की मांग करेगा । लखनऊ जाओ, शादी करो, बच्चे पैदा करो और यथासंभव देश सेवा करो । मैं तुम्हें सभी संकल्पों से मुक्त करता हूँ ।" (पृ-200)

तुलना

1) अनुवादक ने 'never', 'at sometimes or the other' का लोप अनुवाद में किया है । 2) अनूदित अंश का यह सन्देश कि 'जबरदस्ती काटा गया हिस्सा तुमसे कभी न कभी तो बदला लेगा ही' गायब है । 3) बापू के कहने का यह अर्थ कि अगर नवीन ने अभी अपनी इन भावनाओं पर विचार नहीं किया तो वह आगे भी अपने जीवन में

असमंजस में ही फंसा रहेगा। बापू का यह समझाना की उसे जल्द ही कोई फैसला लेना चाहिये, क्योंकि नियति उसे बार-बार सँभलने का मौका नहीं देगी, लक्ष्यभाषा में लेखक के इस सन्देश को अभिव्यक्त करता है। कुछ शब्दों के अनुवाद न होने पर भी यहाँ पर सन्देश आहत नहीं हुआ है।

इस तरह नियति उसे फिर आश्रम से दूर ले गयी।

'मीरा एंड दी महात्मा' उपन्यास भाषिक दृष्टि से जितना आसान है, अंतर्वस्तु की दृष्टि से समझने में उतना ही मुश्किल है। अनुवादक अशोक कुमार ने जिस विश्लेषणपरक प्रविधि से अंतर्वस्तु को पहचाना है, वह एक जटिल कार्य था। जोड़ने-घटाने की प्रक्रिया को अनुवादक ने पूरे उपन्यास के दौरान कम ही अपनाया है। उसकी कोशिश यही रही है कि ज्यादा से ज्यादा लेखक की सृजनात्मकता का अनुवाद में पुनःसृजन कर सके। किसी भी साहित्यिक विधा की अंतर्वस्तु का अंतरण एक चुनौती के रूप में सामने आता है, जिसे अनुवादक ने 'मीरा और महात्मा' में सार्थकता से बोधगम्य और ग्रहणीय बनाया है।

तृतीय अध्याय

अनुवाद की दृष्टि से मीरा और महात्मा : शिल्प

तृतीय अध्याय

अनुवाद एक प्रयोगात्मक विधा है, इसकी प्रक्रिया में प्रयोग, प्रयोजन, प्रयोक्ता आदि कई तत्व समाविष्ट होते हैं। साहित्यिक अनुवाद के सम्बन्ध में विद्वानों ने अपनी-अपनी दृष्टि से विचार किया है। किसी ने उसे पुनर्रचना कहा तो किसी ने पुनर्सृजन; किसी ने अनुसृजन कहा तो किसी ने साहित्यिक पुनर्जीवन; वास्तव में मौलिक भावों, विचारों और चिंतन की अभिव्यक्ति यदि एक सृजन है, तो अनुवाद एक पुनर्सृजन है। मूल कृति में रचनाकार अपने भाव जगत को साकार रूप प्रदान करता है, तो अनुवादक उस भाव जगत से तादात्मय स्थापित कर लक्ष्यभाषा में उसकी पुनर्सृष्टि करता है।

"रचनाकार अपनी सृजन-प्रक्रिया में अवलोकन, अनुभव, चिन्तन-मनन और सर्जनात्मक अभिव्यक्ति चार चरणों से गुजरता है और उसी प्रकार अनुवादक को भी अन्य भाषा की अभिव्यक्ति में रचनाकार की संवेदना के अनुरूप लक्ष्यभाषा में अभिव्यक्ति देनी होती है। अतः अनुवाद में भी सृजनशीलता और संवेदनात्मकता की नितांत अपेक्षा रहती है, क्योंकि इस असंभव कार्य को अधिक से अधिक संभव बनाने के लिए अनुवादक को कवि कर्म के कठिन दायित्व का निर्वाह करते हुए दोहरा प्रयास करना पड़ता है।"[1]

अनुवाद प्रक्रिया में अनुवादक को दोनों भाषाओं के बीच समतुल्यता की खोज करनी होती है, जो कि संभव नहीं है इसलिए यह प्रतिपादित किया गया है कि समतुल्यता अपनी सम्पूर्णता में कभी पूर्ण नहीं होती है, सृजनात्मक साहित्य के अनुवाद में तो कभी नहीं। इस धारणा के लिए सुरेश सिंहल भी कहते हैं कि "सृजनात्मक साहित्य के अनुवाद में केवल भाषा और भाव पर ही जोर नहीं दिया जाता, बल्कि उसके कलात्मक रुप-

---

[1] कृष्ण कुमार गोस्वामी : पृ-273

स्वरुप को भी सहेजा-सँवारा जाता है । कलात्मकता में बिम्ब, प्रतीक, अलंकार, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, सांस्कृतिक एवं दार्शनिक शब्दावली आदि शामिल होते हैं और ये सभी तत्व अनुवादक से सृजनात्मकता की पुरजोर माँग करते हैं ।"[1]

अनुवादक अशोक कुमार का कर्तव्य है कि अंग्रेजी भाषी 'मीरा एंड दी महात्मा' में प्रयुक्त शिल्प को लक्ष्यभाषा में अंतरित करे, अर्थात उसके परिवेश, स्थितियों, परिस्थितियों और संवेदना को गृहण करे तथा लक्ष्यभाषा में सफलता पूर्वक लेखक के सन्देश को लक्षित पाठक तक संप्रेषित करे । अनुवादक के लिए शत-प्रतिशत यह संभव नहीं है की वह लेखक की प्रत्येक संवेदना को अनुभूत कर सके । इसलिए अनुवादक हमेशा इस बात के लिये प्रयासरत रहता है कि वह लेखक के विचारों अर्थात उसकी निकटतम भावनाओं का विकास लक्ष्यभाषा में कर सके । अनुवादक का कर्तव्य है कि वह लक्ष्यभाषा में अनुवाद करते हुए अपनी ईमानदारी का परिचय दे जहाँ तक संभव हो सकता है वहां तक लेखक के सन्देश को अभिव्यक्त करे । 'मीरा एंड दी महात्मा' के हिन्दी अनुवाद 'मीरा और महात्मा' में अनुवादक शिल्प के माध्यम से रचना का सन्देश संप्रेषित करने में सफल हुआ है । यहाँ पर अनुवादक के भाषिक कौशल को जानने के लिए शिल्प के आधार पर तीन वर्गों में विभाजित कर उसका अध्ययन किया जा सकता है - भाषा के स्तर पर, बिम्ब और प्रतीक के स्तर पर तथा शैली के स्तर पर ।

<u>भाषा</u>

अनुवाद को मूलतः एक द्विभाषिक प्रक्रिया कहा जाता है । इन विशेषताओं से सम्पन्न होने के लिए किसी भी अनुवादक को सर्वप्रथम स्रोत भाषा तथा लक्ष्यभाषा के बुनियादी और व्याकरणिक आधार पर उसके विभिन्न बोध स्तरों तथा सम्प्रेषण कला का भली-भांति एवं विस्तृत ज्ञान होना अति आवश्यक है । विभिन्न भाषाओं की प्रकृति तथा

---

[1] सुरेश सिंहल : पृ-55

प्रवृति परस्पर भिन्नता वाली होती है अतः अनुवाद की सार्थकता तथा सफलता हेतु दोनों भाषाओं के मध्य विभिन्न स्तरों पर समतुल्यता का होना परम आवश्यक है । 'एक ब्रिटिश विद्वान जे.सी.कैटफर्ड ने अनुवाद को स्रोत भाषा की पाठ्य समग्री का लक्ष्यभाषा की समतुल्य पाठ्यसामग्री द्वारा प्रतिस्थापन माना है ।'[1] दोनों भाषाओं में प्राप्त समतुल्यता तथा विषमता का ज्ञान उन दोनों भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन से ही सम्भव है ।

"एक दूसरे विद्वान यूजीन ए. नाइडा ने अनुवाद को विज्ञान की श्रेणी में रखते हुए उसे सम्प्रेषण-व्यापार की उपश्रेणी कहा है । उनके अनुसार इस सम्प्रेषण प्रक्रिया में विकोडिकरण (decoding) और कोडीकरण (encoding) की संकल्पना के आधार पर अनुवादक पहले स्रोत भाषा के पाठक का विकोडिकरण करता है और बाद में कोडीकरण के माध्यम से उससे व्यक्त अर्थ की पुनर्रचना या (पुनर्गठन) लक्ष्यभाषा के पाठ में होती है ।"[2]

अशोक कुमार हिन्दी के सृजनात्मक सहित्य से पूरी तरह परिचित हैं, उन्होनें भी लेखक की तरह हिन्दी शब्द सागर का पूरी तरह प्रयोग किया है । तत्सम, तद्भव, देशज, आम बोल चाल की भाषा, मुहावरों की वर्णानात्मकता का उन्होंने भरपूर प्रयोग किया है परन्तु अधिकांश अनूदित कृतियों की तरह यह अनुवाद भी मामूली भूलों से नहीं बच पाया है । अनुवादक का कार्य निस्संदेह चुनौती पूर्ण होता है क्योंकि अनुवाद केवल लिप्यंतरण मात्र नहीं होता है, एक भाषा को दूसरी भाषा में उसकी समस्त निजी संवेदना के साथ प्रस्तुत करना होता है । इस कृति में भी अनुवादक द्वारा पर्याप्त सजगता बरते जाने के बावजूद कुछ ऐसी खामियां मिलती हैं जो मूल पाठ के सम्प्रेषण में कठिनाई पैदा करती हैं ।

---

[1] कृष्ण कुमार गोस्वामी : पृ-18 'The replacement of textual material in one language by equivalent textual material in another language'

[2] वही : पृ-35

शाब्दिक अनुवाद

अनुवाद एक भाषिक प्रक्रिया है जिसमें भाषा की एकमात्र स्वतंत्र और अर्थवान इकाई शब्द है । पाठ में शब्दों का अनुवाद अपेक्षाकृत सरल होता है । शब्दानुवाद करते हुए वाक्यरचना में भाषा की प्रकृति को समझना अनुवादक के लिए आवश्यक है । अनुवादक अशोक कुमार के कुछ शाब्दिक अनुवाद इस प्रकार हैं -

	मूल शब्द		अनूदित शब्द	
1.	Trust	p-47	न्यास	पृ-43
2.	Naïve	p-37	भोले हैं	पृ-33
3.	Graceful	p-47	गरिमापूर्ण	पृ-42
4.	Tumultuous	p-9	उथल-पुथल	पृ-13
5.	Eerie detachment	p-18	वायवीय निरपेक्ष भाव	पृ-20
6.	Apollo bunder	p-19	अपोलो बंदरगाह	पृ-21
7.	Palatial bunglow	p-21	महलनुमा बंगला	पृ-22

सहजनुवाद

अनुवादक ने न केवल शब्दानुवाद अपितु सहजानुवाद भी किया है अर्थात मूलभाषा की रचना का लक्ष्यभाषा में शब्द और अर्थ की दृष्टि से शब्दानुवाद न मिलने पर उसका निकटतम अनुवाद भी किया । सहजानुवाद के कुछ निम्लिखित शब्द हैं -

	मूल शब्द		अनूदित शब्द	
1.	Sluice gates of heaven	p-21	स्वर्ग का दरवाज़ा	पृ-23
2.	Elemental indian lushness	p-22	मूल भारतीय हरियाली	पृ- 23

3. Brushes of fingers	p-23	उंगलियों के स्पर्श	पृ-25
4. Tossing and turning	p-27	करवटें बदलना	पृ-27
5. Asetic Zeal	p-44	उत्साह की अतिरंजना	पृ-39
6. Orchestra of night	p-44	रात की आवाजें	पृ-40

अनुवादक ने अनुवाद करते हुए केवल **शुद्ध** हिन्दी शब्दों का ही प्रयोग नहीं किया है। बल्कि ऐसे शब्दों का प्रयोग है जिसका वर्गीकरण तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी (उर्दू और अंग्रेजी) में किया जा सकता है । इसे शब्दानुवाद के ही क्रम में जोड़ जा सकता है। इस प्रकार के शब्दों के उदाहरण इस प्रकार हैं -

<u>देशज शब्दों का प्रयोग</u>

हिन्दी के परम्परागत शब्दों में कुछ शब्द अज्ञात व्युत्पत्तिक हैं, जिनके भाषा स्त्रोत के बारे में कोई निश्चित जानकारी नहीं है । ऐसे शब्दों को अनेक व्याकरण ग्रंथों में देशज शब्द कहा गया है । देशज अर्थात देश+ज ;देश में उत्पन्न । देशज शब्द किसी क्षेत्र विशेष की भाषा में आम बोलचाल में प्रयुक्त होते हैं, जिनके समतुल्य शब्द शब्दकोश में तो नहीं मिलते हैं पर पाठक उन्हें समझ सकता है । 'मीरा एंड द महात्मा' उपन्यास के देशकाल और उसके परिवेश की अभिव्यक्ति के लिए अनुवादक को कुछ आंचलिक शब्दों का प्रयोग करना आवश्यक था । कुछ देशज शब्द ऐसे होते हैं जो लक्ष्यभाषी समाज की आंचलिकता को प्रदर्शित करते हैं । 'मीरा एंड दी महात्मा' का अनुवाद करते हुए लेखक ने बहुत से ऐसे आंचलिक शब्दों का प्रयोग किया है, ये शब्द इस प्रकार हैं -

मूल शब्द		अनूदित शब्द
1. Brass clasp	p-7	पीतल के बकलसपृ-9
2. Oak tree	p-62	अन्जियाँपृ-53

3. Bluebottle's	p-62	बांज का पेड़पृ-53	
4. Blackberries	p-62	भँवरे	पृ-53
5. Wicker garden gate	p-90	बांस की खप्पचियों से बना फाटक	पृ-75
6. Swept away	p-142	बुहारना पड़ता	पृ-119
7. Jolting	p-147	हिचकोले	पृ-123
8. Door handle	p-215	दरवाज़े की कुण्डी	पृ-173
9. Window latch	p-215	खिड़की की सिटकनी	पृ-173
10.Carding brushe	p-16	धुनियाँ	पृ-18
11.Wrought iron	p-60	ढल्वे लोहे	पृ-51
12.Exhort and Cajole	p-42	फटकार और पुचकार	पृ-38
13.Pillared arches	p-162	मेहराबों	पृ-135

उपर्युक्त लिखे हुए शब्दों के अलावा कुछ और देशज शब्दों का प्रयोग भी अनुवादक ने किया है जैसे कि चुहचुहा, ठिठकी, आग्रह, खूंटीदार, चुन्धियाँ पृ-20, भीड़भाड़ पृ-21, गप्पबजियों पृ-33, गड्डमड्ड पृ-23, फुसफुसाने पृ-12

आधुनिक हिन्दी में प्रचलित कुछ अज्ञात व्युत्पत्तिक शब्दों का प्रयोग अनुवादक ने किया है, तकनीकी दृष्टि से ये देशज शब्द तर्क-संगत नहीं हैं। अनूदित उपन्यास में ऐसे शब्दों का प्रयोग करने के पीछे अनुवादक का **उद्देश्य** उस काल और परिवेश को जीवन्तता प्रदान करना था। साथ ही देशज शब्दों का प्रयोग लेखक के सन्देश को वहन करने में सक्षम बन पड़ा है। इन शब्दों में ऐसे किसी शब्द का भी प्रयोग नहीं है जो लक्ष्यभाषी पाठक के लिए अपरिचित हों। इन आंचलिक शब्दों का प्रयोग उपन्यास के सन्दर्भ को पाठक के लिए आत्मीय बना देता है।

तत्सम शब्द

हिन्दी में प्राप्त तत्सम शब्द वे हैं जिन्हें हिन्दी ने स्त्रोत भाषाओं की ध्वनि-व्यवस्था तथा अर्थ-व्यवस्था के अनुरूप ग्रहण कर लिया। तत्सम का अर्थ है तत+सम - उसके समान। हिन्दी भाषा में ऐसे शब्दों की श्रेणी में केवल संस्कृत से आये हुए शब्दों की ही गणना की जाती है। ऐसे ही कुछ तत्सम शब्दों का प्रयोग अनुवादक ने 'मीरा एंड दी महात्मा' के अनुवाद में किया है, जो लेखक के सन्देश सम्प्रेषण में सहायक सिद्ध हुए हैं। ये शब्द लक्ष्यभाषी पाठक आसानी से उच्चारित कर सकता है। ये तत्सम शब्द उस वातावरण को प्रतिमूर्तित करने में सक्षम हैं जिसका निर्माण मूलभाषी पाठ में हुआ है। अनूदित सन्देश की अभिव्यक्ति में भी ये शब्द सफल हैं। अशोक कुमार द्वारा 'मीरा एंड दी महात्मा' में प्रयुक्त कुछ शब्द दृष्टव्य हैं -

मूल शब्द		अनूदित शब्द	
1. Dairy	p-38	दुग्धशाला	पृ-35
2. Reddish rim	p-22	लाली का वृत्त	पृ-23
3. Vegetarian diet	p-42	निरामिष भोजन	पृ-38
4. Taboos	p-49	वर्जनाओं	पृ-44
5. Tourist	p-41	सैलानी	पृ-44
6. Pristine	p-41	आदिम	पृ-37
7. Unspoiled nature	p-32	अक्षुण्ण प्रकृति	पृ-37
8. Ubiquitous bell	p-32	सर्वव्यापी घंटी	पृ-31

लेखक ने मूल पाठ में इन शब्दों का प्रयोग कर जिस लक्षणापरक अर्थ को मूलभाषी पाठक तक पहुँचाया है। उसी लाक्षणिक अर्थ को शालीनता से तत्सम शब्दों में प्रयोग कर अनुवादक ने लक्ष्यभाषी पाठक के लिए गत्यात्मक बना दिया है। तत्सम के ये शब्द आसानी से समझे जा सकते हैं।

उर्दू और फ़ारसी के शब्द

'मीरा एंड दी महात्मा' उपन्यास के हिन्दी अनुवाद 'मीरा और महात्मा' में अनुवादक अशोक कुमार ने परिनिष्ठित हिन्दी या ख़ालिस उर्दू शब्दों का प्रयोग न कर हिन्दुस्तानी भाषा का प्रयोग किया है, जिसमें उन्होंने उर्दू और फ़ारसी के शब्दों का भरपूर प्रयोग किया है । ये शब्द ऐसे है जो आसानी से हिन्दी भाषी पाठक समझ सकता है । उर्दू भाषी ये शब्द आमतौर पर हर व्यक्ति प्रयुक्त करता है ।

मूल शब्द		अनूदित शब्द	
1. Heart-gripping beauty	p-260	दिलफरेब ख़ूबसूरती	पृ-206
2. Idolatry	p-169	बुतपरस्ती	पृ-139
3. Particularly valuing	p-238	खास तवज्जो	पृ-192
4. Dawn	p-61	अलस्सुबह	पृ-53
5. Pleading	p-109	गुज़ारिश	पृ-92

पदों में उर्दू शब्दों का प्रयोग

1) मूल पाठ - His smile making the seriousness of his words (p-34)

अनूदित पाठ - अपने गंभीर जवाब पर मुस्कराहट का मुल्लमा चढ़ाते हुए (पृ-32)

2) मूल पाठ - An orange-brown henna dyed beard (p-21)

अनूदित पाठ - दाड़ी खिजाब के कारण चम्पई (पृ-21)

3) मूल पाठ - Were bad for the control of passion (p-112)

अनूदित पाठ - मनोवेगों के नियंत्रण के लिए मुफ़ीद नहीं है (पृ-94)

4) मूल पाठ - Spawned ever newer technologies forever greater Slaughter (p-68)

अनूदित पाठ - कत्लेआम की और भी नई तकनीक इजाद कर रहा था (पृ-58)

5) मूल पाठ - The fury in his voice was unmistakable (p-139)

अनूदित पाठ - उनकी आवाज़ में तल्खी साफ़ थी (पृ-115)

6) मूल पाठ - Nobody in the world can long more ardently than I do (p-257)

अनूदित पाठ - यह जितनी शिद्दत से मैं चाहती हूँ उतनी शिद्दत से शायद ही दुनिया में कोई चाहता हो (पृ-206)

उपर्युक्त परिचित शब्दों के अलावा अनुवादक ने पदों में कुछ ऐसे अपरिचित शब्दों का भी प्रयोग किया है, जिसे उर्दू का ज्ञान न रखने वाले पाठक समझ नहीं पाएंगे। जिन शब्दों को समझने के लिए उर्दू के शब्दकोश की आवश्यकता होगी वे इस प्रकार हैं। मुगालते पृ-180, मस्तूलो पृ-20, पैबंद पृ-20, मुखालफत पृ-15, पत्र का मजूमन पृ-16

लिप्यन्तरण

लिप्यन्तरण में स्रोतभाषा के मौखिक माध्यम का लक्ष्यभाषा के लिखित माध्यम में रूपांतरण अर्थात स्रोत भाषा की स्वनिमिक इकाइयों का लक्ष्यभाषा की स्वनिमिक इकाइयों में परिवर्तन किया जाता है। 'मीरा एंड दी महात्मा' उपन्यास के अनूदित पाठ में, कुछ शब्दों का अनुवादक ने लिप्यंतरण किया है, जिससे यह तो स्पष्ट होता ही है कि यह रचना अंग्रेजी भाषा से अनूदित है साथ ही इन शब्दों का प्रयोग मूलभाषा के लेखक के सन्देश की संप्रेषणीयता को भी बनाये रखता है। इन शब्दों के लिप्यंतरण से उपन्यास के संदर्भ को एक अलग जीवन मिला है। ये शब्द हैं -

मूल शब्द	अनूदित शब्द
1. My best comrade gone p-188	माई बेस्ट कामरेड गोन पृ-153

2. Sunset at morning	p-189	सनसेट एट मोर्निंग	पृ-153
3. Anti-cholera belts	p-9	एंटी कोलेरा बेल्ट्स	पृ-10
4. Singer machine	p-21	सिंगर मशीन	पृ-20
5. Carmelite nun	p-32	कर्मेलाईट नन	पृ-31
6. Compost	p-39	कम्पोस्ट	पृ-35
7. Over coat and muffler	p-48	ओवर कोट और मफलर	पृ-44
8. Oh, God our help in ages past followed by God save the king			p-68
ओह गोड अवर हेल्प इन एजिस पास्टफोलोड़ बाय गॉड सेव द किंग			पृ-58

स्रोत भाषा के लिपिचिन्हों की जगह लक्ष्यभाषा में अनुवादक ने जिन लिपिचिन्हों की प्रतिस्थापना की है वह प्रभावी बन पड़ी है। लक्ष्यभाषी उपन्यास में अनुवाद की गंध पूरी तरह से अनुभूत की जा सकती है। अनुवादक ने लिप्यंतरण द्वारा मूलभाषी पाठ के संकल्पनात्मक अर्थ को सुरक्षित रखा है। उपर्युक्त शब्दों में जो यथार्थगत प्रतीक हैं वे केवल लिप्यंतरण से ही सिद्ध हो सकते थे।

<u>वाक्यों का अनुवाद</u>

भाषा की सार्थक महत्तम इकाई वाक्य है, शब्दों के इस व्यवस्थित समूह से ही लेखक के सन्देश को अर्थ की प्राप्ति होती है। वाक्यों में सूक्ष्म, आतंरिक एवं व्यंजक भाव निहित रहता है। अनुवादक अशोक कुमार ने 'मीरा एंड दी महात्मा' का अनुवाद करते हुए कुछ ऐसे वाक्यों का गठन किया है जिसमें शब्द चयन और क्रम से पाठ के मूल अंग्रेजी होने का पता चलता है। अनुवादक ने कुछ शब्दों में सन्दर्भ का प्रयोग न कर

सिर्फ शब्दकोश के ही शब्दों को वाक्यों को स्थान दे दिया है । जिससे कि उन वाक्यों से 'अंग्रेज़ीपन' झलकता है । यथा

1) मूल पाठ - Poor Gandhi has indeed periched (p-9)

अनूदित पाठ - "बेचारे गाँधी तो ख़तम हो गए" (पृ-13)

2) मूल पाठ - The greater the isolation the less the seepage (p-20)

अनूदित पाठ - अलगाव जितना ज्यादा था रिसाव उतना ही कम था (पृ-21)

3) मूल पाठ - the familiar orange globe, though had a menacing reddish rim (p-22)

अनूदित पाठ - वह जाना-पहचाना नारंगी गोला उभरा तो उसके चारों ओर लाली का वृत्त था (पृ-23)

4) मूल पाठ - The days had been dark and damp the remaining hidden behind, a mass of pewter-coloured clouds (p-22)

अनूदित पाठ - दिन भर अन्धेरा और सीलन-सी रहती, सूरज धूसर रंग के बादलों में छिपा रहता (पृ-23)

5) मूल पाठ - Unknown spirit,to herself (p-57)

अनूदित पाठ - खुद को नहीं समझ पाती थीं (पृ-49)

6) मूल पाठ - the heralds of grace came whispering into my heart (p-10)

अनूदित पाठ - अनुग्रह के अग्रदूत मेरे हृदय में जैसे आकर फुसफुसाने लगे (पृ-12)

उपर्युक्त वाक्यों और पदों को पढ़कर ऐसा प्रतीत है जैसे कि अनुवादक ने इन वाक्यांशों को हिन्दी में सन्दर्भ के साथ सोचा ही नहीं और सीधे उनका शब्दशः अनुवाद कर दिया है । अनुवादक का अंग्रेज़ी ढंग का वाक्य-विन्यास लेखक के ढर्रे पर ही चिंतन

करता दिखता है, जिसमें उसका अपना कोई निजी विचार नहीं दिखता है ।

<u>अंग्रेजी के समान शब्दों के लिए हिन्दी में भिन्न शब्दों का प्रयोग करना</u>

'मीरा एंड दी महात्मा' के अंग्रेज़ी पाठ में कुछ शब्द ऐसे हैं जिनकी दृश्यानुसार पुनरावृति हुई है । लक्ष्यभाषा में अनुवादक ने हिन्दी शब्दकोश में मिलने वाले एक जैसे शब्दों का प्रयोग न करके अलग-अलग शब्द लिए है, परन्तु ऐसा करने से अनुवाद के सन्देश पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है, वह मूल के ही जैसे अपना अर्थ संप्रेषित कर रहा है । यथा -

	मूल पाठ		अनूदित पाठ	
1.	Saraswati press	p-185	सरस्वती प्रेस	पृ-150
	Printing Press	p-186	छापाखाना	पृ-151
2.	Cowshed	p-214	गाय की झोंपड़ी	पृ-172
			गायों का बाड़ा	पृ-48

<u>शब्दयुग्म</u>

भाषा को बातचीत के स्तर पर बनाये रखने के प्रयास में अनुवादक ने वाक्यों में शब्दयुग्म का भी प्रयोग किया है । जो कि इस प्रकार है -

1) <u>मूल पाठ</u> - I do not remember his exact words (p-249)

<u>अनूदित पाठ</u> - मुझे उनके शब्द <u>हू ब हू</u> याद नहीं हैं (पृ-200)

2) <u>मूल पाठ</u> - My wish to leave the ashram and go back to my earlier life is becoming stronger by the day (p-248)

<u>अनूदित पाठ</u> - आश्रम छोड़कर अपने पुराने जीवन में लौटने की मेरी इच्छा <u>दिन ब दिन</u> तीव्र होती जा रही है (पृ-199)

भाषा की सामाजिक सांस्कृतिक सीमाएं

अनुवाद में अननुवाद्यता का एक कारण आंचलिकता भी होता है । आंचलिकता से अभिप्राय है किसी विशिष्ट भू-भाग से सम्बंधित सामाजिक-सांस्कृतिक विशेषताएं । प्रत्येक क्षेत्र की अपनी कुछ निजी विशिष्टाएँ होती हैं, जो उन्हें अन्य स्थानों से अलग करती हैं । अनुवाद करते हुए लक्ष्यभाषा में अनुवादक को खान-पान, वेशभूषा, परम्पराओं आदि को सुरक्षित रखना एक जटिल कार्य है । ऐसी स्थिति में स्रोतभाषा के समतुल्य लक्ष्यभाषा में पर्याय ढूंढना निरर्थक है । किसी भी अन्य भाषा से अनूदित हुए कथ्य में वहां के समाज और संस्कृति की सूचना अवश्य मिलती है । 'मीरा एंड दी महात्मा' उपन्यास में लेखक ने बहुत से ऐसे शब्दों का प्रयोग किया है, जो यूरोप की संस्कृति को व्यक्त करते हैं । कुछ शब्द और भी हैं जो अहमदाबाद और गुजरात में खान-पान और वेशभूषा के लिए प्रयोग किये जाने वाली वस्तुओं का परिचय पाठक को देते हैं ।

वेशभूषा

आलोच्य उपन्यास के लेखक सुधीर कक्कड़ ने लन्दन, फ्रांस और भारत में पहने जाने वाले परिधानों का एक-दो जगह उल्लेख किया है । लन्दन में पहने जाने वाले परिधानों का अनुवादक ने केवल लिप्यन्तरण मात्र कर दिया है । जब मीरा फ्रांस से भारत आयीं तो उन्होंने लन्दन में अपनी विलासिता की हर वस्तु का त्याग कर दिया था । भारत में पहनने के लिए कुछ सूती वस्त्र रखे साथ ही लन्दन में पहने जाने वाले कुछ अन्य वस्त्र भी । ऐसे ही कुछ शब्दों का प्रयोग इस अंश में है -

यूरोपीय वस्त्र

1) मूल पाठ

"a couple of baggy Shetland wool pullovers, woollen scarf almost the size of a small shawl, which Madeline had herself self spun dyed or

woven during the past year, cotton underwear, two pairs of sensible walking shoes" (p-5)

अनूदित पाठ

"फ्रॉक के अलावा थैले में शैट्लैंड ऊन के दो ढीले स्वेटर, लगभग शॉल के आकर का ऊनी स्कार्फ भी था जिसे उन्होंने साल भर में बुनकर, रंगकर तैयार किया था । इसके साथ ही दो सूती अंडरवियर, दो जोड़े जूते " (पृ-9)

2) **मूल पाठ**

Unimaginative little man with a liberal sprinkling of dandruff on the shoulders of his worn-out tweed jacket (p-70)

अनूदित पाठ

वह कल्पनाशून्य, ठस किस्म का नाटे कद का व्यक्ति था, जिसके पुराने ट्वीड जैकेट पर बालों से झड़ी रूसी बिखरी होती थी । (पृ-58)

शिल्पगत प्रयोग पर ध्यान देते हुए अनुवादक को भौगोलिक सन्दर्भों की ओर भी ध्यान देना होता है, स्रोत भाषा की सांस्कृतिक-सामाजिक पृष्ठभूमि का ज्ञान लक्ष्यभाषी पाठक को देना अनिवार्य होता है, इसमें कोई भी बाधा आने का तात्पर्य मूल भाषी लेखक के सन्देश में बाधा आना है । अनुवादक अशोक कुमार ने 'Shetland wool' और 'tweed jacket' का केवल लिप्यन्तरण किया है । ऐसे में किसी समतुल्य शब्द की प्रतिस्थापना संभव नहीं थी । परन्तु इन शब्दों का पर्याय अनुवादक ने लक्ष्यभाषी पाठ में न तो कोष्ठक में ही दिया है और न ही उसे पाद टिप्पणी में ही स्पष्ट किया है। जबकि पाद टिप्पणी में इन शब्दों का उल्लेख लक्ष्यभाषी पाठक के लिए उपन्यास को अर्थगर्भित बनाये रखता और इनका अर्थ जानने के लिए उसे बीच में किसी कोश का प्रयोग नहीं करना पड़ता ।

उदहारण के लिए

शैट्लैंड ऊन

स्कॉटलैंड के उत्तर में एक द्वीप-समूह है जहाँ पर इस शैट्लैंड ऊन का निर्माण किया जाता है ।

ट्वीड जैकेट

जो हैरिस ट्वीड कंपनी की हाथ से बनी जैकेट थी और लन्दन में काफी प्रचलित थी ।

भारत के पहनावे

इसी प्रकार दक्षिण भारत के अहमदाबाद क्षेत्र में राबाड़ी औरतों द्वारा पहना जाने वाला परिधान जो मूल लेखक ने जैसा बताया है, वैसा ही अनुवादक ने भी उसे अनूदित किया है । क्षेत्रीयता की भिन्नता के कारण भी राबाड़ी औरतों का यह परिधान लक्ष्यभाषी पाठक के लिए उनके पहनावे को समझने के लिए कोई उलझन पैदा नहीं करता है, अर्थात बोधगम्य अनुवाद है ।

1) **मूल पाठ**

Dressed in long black skirts, their lithe torsos encased in blouses heavily embroidered in yellow, maroon, green thread and studded with mical fragments their kohl-eyes and foreheads tattooed with curving garlands of black-dots (p-50)

अनूदित पाठ

लम्बे काले घाघरे और पीले, लाल, हरे धागे से भरी कशीदाकारी और अभ्रक के चमकीले टुकडों से सजी चोली पहनने वाली उन औरतों की आंखे काजल से भरी होतीं । (पृ-44)

खान-पान

समाज और संस्कृति को उद्घाटित करने वाला एक अन्य घटक है, किसी देश या प्रदेश में बनने वाला खाना । भारत और यूरोप में खान-पान के प्रयोग में लाये जाने वाले

व्यंजन को मूल लेखक ने उसके क्षेत्रीय नाम से ही उल्लिखित किया है । अनुवादक अशोक कुमार ने गुजरात में खाए जाने वाले व्यंजन और लन्दन में पीये जाने वाली शराब का केवल लिप्यन्तरण मात्र ही कर दिया है । आश्रम में भोजन को लेकर बापू के किये जाने वाले प्रयोगों से बा बिल्कुल अलग रहती थीं । गुजराती खाने के एक व्यंजन को बा बापू के खान-पान में किये जाने वाले प्रयोग के कारण कभी नहीं छोड़ पाती थीं । यथा -

1) **मूल पाठ**

With her fondness for gujrati farsan she had always been reluctant to take part in Bapu's experiment with food. (p-114)

अनूदित पाठ

भुने हुए गुजराती फरसाण के प्रति अपने लगाव के कारण वे भोजन के मामले में बापू के प्रयोगों से अलग ही रहती थीं । (पृ-96)

लन्दन में रहते हुए मीरा भारत गुजरात में स्थित साबरमती आश्रम में रहने का फैसला करती है, जिसके लिए वे खुद को आश्रम में रहने के लिए तैयार करने लगीं और खाने में बहुत सारी चीजों का त्याग भी कर दिया । यथा -

2) **मूल पाठ**

Her father, absorbed in his work at the Admiralty and often away on tours of inspection, did not seem to notice when Madeline gave up her evening glass of sherry and the occasional glass of wine with dinner. (P-15)

अनूदित पाठ

उनके पिता को शायद यह पता नहीं चला कि मेडलिन ने शाम को शेरी और रात के भोजन के साथ कभी-कभार शराब का जाम लेना कब छोड़ दिया (पृ-18)

'फरसाण' और 'शेरी' इन शब्दों को पाद टिप्पणी में स्पष्ट करना आवश्यक था, जो कि अनुवादक ने नहीं किया है ।

Sherry - स्पेन में सफ़ेद अंगूरों से बनने वाली शराब होती है ।

Farsan - गुजरात में चने के आटे से बना हुआ एक व्यंजन होता है जो नाश्ते में खाया जाता है ।

3) **मूल पाठ**

Smoking their woodbine cigarettes as they helplessly dragged out their maimed years was bad enough. (P-69)

अनूदित पाठ

विक्लांग लोगों को सिगरेट पीते हुए खीजते देखना काफी कष्टपृद था (पृ-59)

उपर्युक्त अनुवाद में अनुवादक ने 'woodbine cigarette' की जगह केवल सिगरेट शब्द का प्रयोग किया है । यह प्रयोग अनुवादक ने इसलिए किया है क्योंकि हिन्दी भाषी पाठक 'वुडबाइन' का अर्थ नहीं समझता । लेकिन, क्योंकि सामाजिक सूचना सभी स्तरों पर दी जाती है । इसलिए यह प्रयोग समतुल्य तो है ,परन्तु मूल लेखक की उस सामाजिक सूचना को देने में असमर्थ जान पड़ता है 'जिसमें वह यह बताना चाहता है कि वुडबाइन सिगरेट सस्ती हुआ करती थी इसलिए उसे सिर्फ कम आय वाले या कामगार लोग ही पिया करते थे ।'

Woodbine cigarettes, शुरुआती दिनों में वुडबाइन ब्रांड की सस्ती सिगरेट आती थी जिसे यूरोप के कामगार लोग पिया करते थे । इसके समतुल्य भाव के लिए यहाँ 'बीड़ी' का प्रयोग किया जा रहा था ।

अनुवादक अशोक कुमार सामाजिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक सन्दर्भ में लेखक के सन्देश को पूर्ण अभिव्यक्ति नहीं दे पाये हैं । इसे अनुवादक की एक चूक ही कहा जा सकता है । कई बार कुछ शब्दों की व्याख्या लक्ष्यभाषा की प्रकृति के अनुसार भी अनुवादक

को करनी पड़ती जिससे की अनूदित पाठ मूल पाठ का सहपाठ बन सके । स्थानीय सूक्ष्मताओं की जानकारी देने से पठनीयता की गति बढ़ जाती ।

मूल कृति से तादात्मय

मूल लेखक के विचारों की कुशल अभिव्यक्ति लक्ष्यभाषा में करना अनुवादक का प्राथमिक कर्तव्य है । 'मीरा एंड दी महात्मा'के अनुवाद में अनुवादक ने अंग्रेजी के कुछ शब्दों का अनुवाद इस प्रकार किया है कि वे अनूदित तो हैं लेकिन अर्थ की बोधगम्यता को नुक्सान पहुंचाते हैं । एक आम पाठक बिना शब्दकोश के इन शब्दों से तादात्म्य नहीं बिठा सकता है ।

मूल पाठ		अनूदित पाठ	
1. Rabari Women	p-50	राबारी औरतें	पृ-44
2. Omnibus	p-49	बड़ी-सी बस	पृ-44
3. Twenty wooden crates	p-12	लकड़ी के बीस क्रेट	पृ-10
4. Become a barnacle	p-159	बार्नेकल जैसा बनने	पृ-131

मूलभाषी पाठ के सन्देश में ये अनूदित शब्द बाधा पहुंचाते हैं । इन शब्दों से ऐसा प्रतीत होता है कि अनुवादक लेखक के परिवेश की मनोभूमि और उपर्युक्त लिखे शब्दों के आस-पास की छाया का निर्माण लक्ष्यभाषा में नहीं कर पाया है । पृष्ठ के अंत में या शब्द के ही साथ कोष्ठक में इन शब्दों के समानार्थी अर्थ को दिया जा सकता था । इसे अनुवादक की कमी ही कहा जा सकता है ।

शब्दों का अटपटा अनुवाद

लेखक ने आलोच्य उपन्यास को लिखते हुए जीव-जंतुओं की अलग-अलग प्रजातियों को भिन्न दृश्यों में दिखाया है । अनूदित पाठ को पढ़ते हुए हिन्दी भाषी पाठक के समक्ष

ऐसे कुछ शब्द आते हैं जो उन प्रजातियों की जानकारी पाठक को नहीं दे पाते हैं और कहीं-कहीं तो ऐसी किसी प्रजाति के विद्यमान न होने की आशंका भी होती है ।

मूल पाठ		अनूदित पाठ	
1. Welsh pony	p-58	वेल्श खच्चर	पृ-50
2. Swallow	p-10	अबाबील (चिड़िया)	पृ-11
3. mangy dogs	p-19	खरसैले कुत्ते	पृ-21
4. hedgehogs	p-54	साही पक्षियों	पृ-47

अनुवादक ने क्रमशः 'वेल्श खच्चर' शब्द का प्रयोग किया है । जबकि इसके लिए 'वेल्श टट्टू' या 'वेल्श ब्रितानी टट्टू' शब्द अधिक उपयुक्त रहता । क्योंकि 'वेल्श पोनी' घोड़े की वह प्रजाति है जो ब्रिटेन में खेत जोतने या संभ्रांत परिवारों के सैर-सपाटे के लिए उनकी बग्घी के आगे लगाए जाते हैं । इसके विपरीत खच्चर भारत में सामान ढोने के काम में लाये जाते हैं ।

इसके बाद दूसरा शब्द है 'swallow' जिसके लिए अनुवादक ने 'अबाबील चिड़िया' लिखा है । जिसे आमतौर पर हिन्दी भाषी लोग नहीं समझ पाएंगे । अबाबील चिड़िया 'गौरैया पक्षी' के ही समूह में आती है, जिसकी लंम्बी पूँछ होती है । यह केवल शब्दकोश का ही शब्द है ।

ऐसे ही 'mangy dogs' शब्द को अनुवादक ने शब्दकोश का शब्द 'खरसैले कुत्ते' दे दिया है जबकि इसके लिए 'कमज़ोर कुत्ते' या 'खुजली वाले कुत्ते' शब्द अधिक पठनीय होता ।

'Hedgehog' शब्द के लिए अनुवादक ने 'साही पक्षी' शब्द को लिया है, जबकि यह एक जंगली कांटेदार चूहे की प्रजाति होती है, जो उड़ना भी नहीं जानती । इसलिए 'साही पक्षी' अटपटा प्रयोग ही कहा जायेगा क्योंकि चूहे और पक्षी दोनों को अनुवादक ने मिला दिया है ।

मुहावरों और लोकोक्तियों का अनुवाद

मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग से उपन्यास की भाषा प्रौढ़ हो जाती है । परन्तु इनके अनुवाद की भी कुछ सीमा होती है, जिनका निराकरण अनुवादक को बहुत ही सतर्कता से करना होता है । स्रोत भाषा के मुहावरों की पुनर्रचना लक्ष्यभाषा में करने के लिए अनुवादक को सम्तुल्यों की खोज करनी होती है । 'मीरा एंड दी महात्मा' के लेखक सुधीर कक्कड़ ने उपन्यास में कई जगहों पर मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग किया है । जो सामाजिक या सांस्कृतिक या किसी अन्य सन्देश को लक्षणा के द्वारा मूलभाषी पाठक तक पहुंचाता है । इसी लक्षणा को अनुवादक को सतर्कता पूर्वक समझकर लक्ष्यभाषी पाठक तक संप्रेषित करना होता है ।

स्रोत भाषा में कई स्थानों पर ऐसे मुहावरों का लेखक ने प्रयोग किया है जिनका समतुल्य लक्ष्यभाषा हिन्दी में उपलब्ध है । जिस सन्देश को लाक्षणिक माध्यम से लेखक पाठक तक पहुँचाना चाहता था उसे अनुवादक ने लक्ष्यभाषा के माध्यम से सटीक अर्थाभिव्यक्ति कर पहुँचाया है । कुछ उदाहरण हैं -

1) मूल पाठ - How is an elephant to think of an ant? p- 14

अनूदित पाठ - हाथी भला चींटी के बारे में कैसे सोचेगा पृ -17

2) मूलपाठ - Followed in a letter rather than a spirit p-156

अनूदित पाठ - लकीर के फ़क़ीर की तरह पालन पृ-129

3) मूल पाठ - An eye for an eye will surely make the whole world blind p-229

अनूदित पाठ - आँख के बदले आँख लेने से तो पूरी दुनिया ही अंधी हो जाएगी p-184

4) मूल पाठ - It was a leap in the dark p-227

अनूदित पाठ - यह अँधेरे में छलांग लगाने जैसा था पृ-182

लाक्षणिक प्रयोगों से भाषा में गहरी अर्थ-व्यंजना आ जाती है, इनका अन्वय करने में पाठक को एक विशेष प्रकार के आह्लाद की अनुभूति होती है, भाषा की प्रभाव तीव्रता बढ़ जाती है। भाषा में मुहावरों से सामाजिक और सांस्कृतिक सत्यता का परिचय मिलता है। उपर्युक्त उदाहरणों में अनुवादक ने लेखक के सन्देश को सजीव बना दिया है। यहाँ पर हिन्दी मुहावरे मूल उपन्यास में आने वाले मुहावरों की प्रभावाभिव्यन्जकता को व्यक्त करने में सफल हो पाए है। अनुवादक अशोक कुमार ने लक्ष्यभाषा में स्रोत भाषा से आने वाले कुछ ही मुहावरों का विवेकपूर्ण प्रयोग कर अपनी कुशलता का परिचय दिया है।

अंग्रेजी शब्दों का हिन्दीकरण

'मीरा एंड दी महात्मा' के अनुवाद में अनुवादक ने कुछ शब्दों का हिन्दीकरण भी किया है। कहने का तात्पर्य यह है कि कुछ शब्दों का अनुवाद करते हुए न तो अशोक कुमार ने शब्दकोश का ही प्रयोग किया है और न ही संदर्भगत अर्थ को ही संप्रेषित किया है। इससे यह तो ज्ञात होता ही कि 'मीरा और महात्मा' अंग्रेजी से ही अनूदित उपन्यास है। यथा -

मूल शब्द		अनूदित शब्द	
1. Pretorian guard	p-190	प्रिटोरियाई सिपाहियों	पृ-154
2. Pattadars	p-22	पट्टेदार	पृ-22
3. Australian Walers	p-26	ऑस्ट्रेलियाई वेलर (घोड़े)	पृ-26

कुछ वाक्यों एवं पदों एवं शब्दों में अनुवाद की गलती

अनूदित उपन्यास को पढ़ते हुए कहीं-कहीं पर ऐसा लगता कि अनुवादक ने 'मीरा एंड

दी महात्मा' का अनुवाद जल्दी अर्थात तुरत-फुरत में किया है । जिससे की गलतियों का होना स्वाभाविक था । उदहारण के लिए

शब्द

1. Leather valise	p-9	उम्दा चमड़े से बना थैला	पृ-11
2. Musty smelling rooms	p-21	पुराने-से-कमरों में	पृ-23
3. A whispy gray moustache	p-36	खिचड़ी लच्छेदार मूंछ	पृ-33

उपर्युक्त शब्दों में क्रमशः 'valise' के लिए अनुवादक ने 'थैला' शब्द का प्रयोग किया है, जबकि इसके लिय 'अटैची', 'Musty smelling rooms' का अर्थ 'सड़े हुए बदबूदार कमरे' होता है, 'whispy gray moustache' का अर्थ होता है 'छोटी हल्की मूंछे' । उपर्युक्त शब्दों का अनुवाद गलत किया गया है जिसने लेखक के सन्देश को ही विपरीत बना डाला है ।

पद

1) मूल पाठ - After all he was fifty- five years old (p- 11)

अनूदित पाठ - आखिर वे पचास की उम्र के हो चुके थे । (पृ- 15)

2) मूल पाठ - I am only learning to card, spin and speaking hindi. (p-48)

अनूदित पाठ - मैं केवल सूत कातना और हिन्दुस्तानी सीख रही हूँ । (पृ-48)

उपर्युक्त वाक्यों में क्रमश: fifty-five का अनुवाद पचास और Hindi का हिन्दुस्तानी है । जबकि लेखक ने गाँधी जी की उम्र 55 वर्ष बताई है और हिन्दी और हिन्दुस्तानी दो अलग-अलग अर्थ वहन करते है । हिन्दी भाषा में केवल परिनिष्ठित हिन्दी ही आती है, जबकि हिन्दुस्तानी के अंतर्गत उर्दू और हिन्दी के मिले-जुले शब्द आते हैं ।

<u>अतिरिक्त जोड़ा हुआ पैराग्राफ</u>

अनुवादक अशोक कुमार ने प्रकरण-10 में एक अनुच्छेद को अलग से जोड़ा है। जो इस प्रकार है -

'उसी गरमी के दिनों में एक शाम प्रार्थना सभा की समाप्ति पर मीरा ने सभा में शिकायत की कि कुछ भाई-बहन स्नानघर में 'पैशाब' किया करते हैं। जब उन्होंने अँगरेज़ मेम (हालाँकि अब हम उन्हें मेम नहीं मानते थे) की तरह 'पेशाब' की जगह 'पैशाब' का उच्चारण किया तो उनका हिन्दी शिक्षक होने के नाते मैंने आंखे तरेरीं। लेकिन बापू काफी नाराज़ हुए "कितनी गन्दी आदत है यह! नहाने की जगह पर पेशाब करना राक्षसी वृति है या घृणित कर्म। गलती करने वाले अगर यह सोचते हैं की पानी से पेशाब की गंध बह जाएगी तो वे गलत हैं। मीरा बेन की नाक को धोखा नहीं दिया जा सकता।"

लेकिन बापू ने जिसे राक्षसी वृति कहा था वह गायब नहीं हुई। मीरा अक्सर साझा स्नानघर में सूंघ लेतीं और शिकायत करतीं कि स्त्री-पुरुष दोनों नहाने के दौरान पेशाब करते हैं।'[1]

इसे अलग से जोड़ने का अर्थ और उद्देश्यों अनुवादक के लिए क्या था, उस विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता है।

---

[1] 'मीरा और महात्मा' पृ-100

(ख) <u>बिम्ब और प्रतीक</u>

साहित्यिक अनुवाद में बिम्बों और प्रतीकों का विशेष महत्त्व होता है। क्योंकि साहित्य की हर एक विधा और विधा के हर के अंश को किस्सागो की शैली में नहीं कहा जा सकता। उपन्यास की कथा में ऐसे अनेक दृश्यों का निर्माण किया जाता है जिससे कि पाठक को वह आत्मीय हो सके। बिम्बों का चोला ओढ़े हुए लेखक के शब्द पाठक को उस जीवंत परिवेश में ले जाना चाहते हैं जिसमें उसे जीवन का अनुभव हो। दूसरी ही ओर प्रतीक लेखक की उस **बुद्धिमत्ता** की ओर इशारा करते हैं जिससे कि वह अपनी बातों को शब्द प्रति शब्द नहीं कहता, अपितु एक-एक प्रतीक से पाठक को चरित्रों और घटनाओं के बारे में सोचने को मजबूर कर देता है।

अनुवादक अशोक कुमार ने भी 'मीरा एंड दी महात्मा' के प्रतीकों और बिम्बों को हिन्दी अनुवाद 'मीरा और महात्मा' में लेखक के अनुसार ही अनूदित किया है।

<u>बिम्ब</u>

जहाँ पर प्रस्तुत-अप्रस्तुत के बीच की पार्थक्य रेखाएं समाप्त हो जाती हैं। एक सच्चे बिम्ब का उद्‌भव वहीं होता है जिसे अनुभव किया जा सकता है। उपन्यास में आने वाले बिम्बों को लेखक ने अपने कला-कौशल और विचारों की **उद्दात्ता** के माध्यम से चित्र भाषा में अभिव्यक्त किया है।

लेखक ने 'मीरा एंड दी महात्मा' में ऐसे बहुत से दृश्यों की रचना की है, जो बिम्बात्मक हैं। चरित्रों की मूल संवेदनाओं और उपन्यास के सन्देश को साकार करने के लिए ही भाषा बिम्बों का माध्यम ग्रहण करती है। उपन्यास में एक दृश्य आया है जब पृथ्वी सिंह दो वर्ष बाद सेवाग्राम आश्रम वापस लौटा और बापू की कुटिया के पास बरामदे में ही उनका इंतज़ार कर रहा था, तभी पृथ्वी के आने की खबर सुन कर मीरा अपना सारा काम छोड़ उसकी ओर दौड़ी चली आती है। मीरा के इस उतावलेपन को

देख पृथ्वी सिंह उनकी ओर निर्वाक मुद्रा में देखते हुए अपने कदम पीछे हटाने लगा। इस घटना का उल्लेख कथाकार को पृथ्वी के संस्मरणों से ही मिलता है। जिसे उसने अपने शब्दों में कहा है, यथा -

मूल पाठ

'Prithvi!' she cried, happy to see him back.

It all happened so fast that Prithvi could not help his reaction. Her movement toward him was too impetuous, her outstretched hand seeking to take his too eager. He recoiled as if she was the carrier of an infectious disease, raising his folded hands into a polite Namaste before stepping back hastily, almost tripping against the door step of Bapu's room. (p-249)

अनूदित पाठ

उन्हें देखकर वे चीख पड़ीं, "पृथ्वी !!"

यह सब इतनी तेजी से हुआ की पृथ्वी कुछ सोच न पाए कि क्या करें। मीरा हाथ फैलाए उनका हाथ पकड़ने के लिए उतावली से उनकी और बढ़ रही थीं। वे ऐसे पीछे हटे मानो मीरा किसी संक्रामक बीमारी से ग्रस्त हों। पीछे हटते हुए पृथ्वी ने विनम्र नमस्ते की मुद्रा में हाथ जोड़ दिए। इस क्रम में उनके पैर बापू के दरवाज़े की चौखट पर लड़खड़ा गए। (पृ-201)

अनुवादक ने मीरा का 'चीख पड़ना', 'चौखट पर लड़खड़ाना' दिखाया है, जिसने लक्ष्यभाषा में चाक्षुष बिम्ब से युक्त दृश्य को सजीव और नाटकीय भी बना दिया है। अनुवादक बिम्ब निर्माण में सफल रहा है।

नवीन जब नमक आन्दोलन में शामिल होने गया तो उसने वहां पर एक अकल्पनीय दृश्य देखा। उसने देखा कि आन्दोलन में आये हुए देश के विभिन्न वर्गों

के लोगों ने भिन्न वेशभूषा धारण की हुई थी । यह सभी गाँधी जी की अहिंसक फ़ौज के वे सैनिक थे जो देश के स्वाधीनता संग्राम में एकजुट होकर खड़े थे । मीरा की जीवनी लिखते हुए नवीन उस दृश्य को याद कर बिम्बों से उसका चित्रण करते हुए कहता है -

मूल पाठ

Some were barefoot, others wore old, brown canvas shoes or cheap leather chappals, the soles reinforced by swathes of rubber cut front discarded truck tyres. The men's dhoti begans at the waist but ended anywhere between the knee and the ankle. A few were bare-chested, most wore long sleved kurtas or hand thrown a light cotton wrap around there shoulders. The variety of beard and moustaches, almost equal to the number of clean shaven faces,... (p-197)

अनूदित पाठ

इस फ़ौज में कुछ सैनिक नंगे पाँव थे, कुछ उम्र दराज थे, कुछ के भूरे कैनवास के जूते थे या चमड़े की चप्पलें थीं, जिनके तल्ले पुराने ट्रक टायरों के टुकड़ों के थे । उनकी धोती कमर से शुरू होकर घुटनों और एड़ी के बीच कहीं जाकर खत्म होती थी कुछ खुली छाती वाले थे, तो अधिकतर ने लम्बी बांह के कुर्ते पहने थे या हलकी सूती चादर लपेट रखी थी । तमाम तरह की मूँछ-दाड़ी वाले जितने लोग थे, उतने ही सफाचट लोग थे... (पृ-160)

उपर्युक्त अनूदित अंश में 'चमड़े की चप्पलें', 'लम्बी बांह के कुरते', 'तमाम तरह की मूँछ-दाड़ी' जैसे बिम्बात्मक शब्दों का प्रयोग कर अनुवादक नमक आन्दोलन में एकजुट हुए लोगों का दृश्य बनाने में सफल हुआ है । इस अंश को पढ़कर लक्ष्यभाषी

पाठक को ऐसी ही अनुभूति होती है जैसे कि ये दृश्य उसकी आँखों के सामने चल रहा हो।

सुधीर कक्कड़ ने 'मीरा एंड दी महात्मा' को सार्थक बनाने के लिए अपने काल्पनिक बिंबों को मूर्त रूप दिया है। प्रकृति के फैले हुए आंचल में मेडलिन के परिवेश को बिखेरा है। लेखक ने अपनी ही कल्पना से उत्कृष्ट चाक्षुष और ऐन्द्रिक बिम्बों का प्रयोग कर मेडलिन के बचपन में अनुभूत किये जाने वाली अनुभूतियों को चित्रित किया है। लेखक ने इस दृश्य को अनूदित करने के लिए अपने अनुवाद धर्म का पालन करने की पूरी कोशिश की है। उदाहरण के लिए-

मूलपाठ

We leave the house at dawn, walking up the partly cobbled lane that leads to the woods. Shrugging of the last remnants of sleep, my eyes begin to make out the shapes of the hedges bordering the damp fields alive and breathing around us. Gradually, the light become stronger, revealing the speckled sphere of the sky. Ferns stick out the gaps between the old flagstones. Blades of grass lining the path are bending under the weight of translucent beads of moisture. Reaching the woods, the lane breaks into pioneering paths that twist in the undergrowth before they disappear into shadows begin to lighten as the sun climbs higher. Spotted butterflies are all around us. (p-61-62)

अनूदित पाठ

कच्ची-पक्की सड़क पर चलते हुए हम जंगल की ओर चल पड़े थे। नींद के आखिरी कतरे को झटकते हुए मेरी आँखें चारों ओर पसरे जीवंत, सांस लेते सिंचित खेतों के किनारे लगी झाड़ियों के आकारों को महसूस करने लगी थीं। धीरे-धीरे रोशनी तेज हो

रही थी और आसमान का परिदृश्य स्पष्ट हो रहा था । मील के पुराने पत्थरों के बीच की दीवारों से लतरें झाँक रही थीं । रास्ते पर बिछी घास ओस की चमकती बूंदों के बोझ से झुकी जा रही थीं । जंगल में पहुंचकर रास्ता पगडंडियों में बदल गया था और गहरी छायाओं के बीच जाता हुए घास और पौधों से ढक गया था । जंगल पहुँचते-पहुँचते सूरज कुछ और ऊपर चढ़ आया था और साए हलके होते जा रहे थे । हमारे चारों ओर रंग-बिरंगी तितलियाँ नाच रहीं थीं । (पृ-53)

प्रकृति की जो छाया स्रोतभाषा में है वही अनूदित अंश में भी मिलती है । जिस सौन्दर्य से लेखक ने प्राकृतिक चित्र को खींचा है, उसे अनुवादक ने लक्ष्यभाषा में प्रयुक्त शब्दों जैसे 'ओस की चमकती बूंदों', 'रंग-बिरंगी तितलियाँ' का प्रयोग कर चाक्षुष और ऐन्द्रिक 'सांस लेते सिंचित खेतों' का बिम्ब निर्मित कर नयारूप दिया है । ऐसे चित्रवत एवं बिम्बवत शब्दों का प्रयोग कर लक्ष्यभाषी पाठक का कुछ देर के लिए प्रकृति के साथ भावसाम्य स्थापित करने में अनुवादक सफल रहा है । लेखक की चिंतनधारा और रचना शैली के अनुरूप ही अनुवाद किया है हिन्दी भाषी पाठक के लिए यह दृश्य अनुपम बन गया है ।

<u>प्रतीक</u>

ऐसे सभी शब्द चिन्ह प्रतीक होते हैं जिनसे किसी अन्य वस्तु का बोध होता है । शब्दों के प्रतीकात्मक व्यवहार की परम्परा अत्यंत प्राचीन रही है । 'प्रतीकों के द्वारा अर्थ और अनुभव के विराट संसार की व्यंजना कलाकारों ने ही की है ।'[1] प्रतीक विधा का एक अनिवार्य गुण यह है कि वे शारीरिक, सामाजिक और भावनात्मक स्तर पर साकार होते हैं । प्रतीकों के द्वारा अर्थ और अनुभव के विराट संसार की अभिव्यंजना साहित्य में संभव है । आलोच्य उपन्यास में ऐसी अनेक घटनाएं हैं जिसमें परिस्थिति एवं परिवेश

---

[1] सुरेश महेश्वरी, बालेन्दु शेखर तिवारी : पृ-166

के उल्लेख में एक प्रतीकात्मक अर्थ छिपा है। मीरा के आश्रम में आने के बाद गाँधी जी जब पहली बार गवर्नर के निमंत्रण की बैठक पर बम्बई के लिए रवाना हो रहे थे, तो उन्हें जाते देख मीरा के आंसू बहने लगे जो थम नहीं रह थे। उस घटना को लेखक ने इस प्रकार व्यक्त किया है -

मूल पाठ

His folded hand acknowledging the ovation of the crowd that had quickly gathered on hearing that Gandhi ji was travelling on the train, when suddenly she found to her astonishment a stream of tears coursing down her face, its rush unstoppable. The tears seemed to spring from an unknown recess in her heart; they did not belong to her. (p-123)

अनूदित पाठ

उनकी रवानगी की खबर सुनकर वहां भीड़ इकट्ठी हो गयी थी और गाँधी जी हाथ जोड़ कर भीड़ का अभिवादन कर रहे थे। तभी मीरा अचानक आश्चर्य में पड़ गयीं की उनकी आँखों से आंसू बहने लगे और वे रुकने का नाम नहीं ले रहे थे। ये आंसू उनके ह्रदय के किसी कोने से फूट रहे थे, वे आंसू उनके अपने नहीं थे। (पृ-103)

बापू का मीरा से पहली बार दूर जाना उसे दुःख तो दे ही रहा था लेकिन वह इसे शब्दों में नहीं कह सकती थी। वह दूर खड़ी हुई उनकी आँखों में तो देख रही थी लेकिन उनके शब्दों से ज्यादा उनके आंसूं बोल रहे थे। अनूदित अंश में 'आंसू' मीरा के 'प्रेम के प्रतीक' हैं जिसे अनुवादक अनूदित अंश में दिखाने में सफल रहा है।

जब मेडलिन पहली बार भारत आती हैं तो बम्बई के बाज़ार में फैली हुई अजीबों-गरीब मसालों की गंध उन्हें विचलित कर देती है और तभी बोगेनवेलिया से भरी दीवार की ओर भी उनका ध्यान जाता है ...

मूल पाठ

unique aroma which seeped through the walls the British head erected over two hundred years they had been in India. The walls were not only the red and orange bougainvillea-covered brick walls which enclosed their spacious bungalows, but also those of rigid formality and social distance which the colonial rulers had erected to keep India and Indians out. (p-20)

अनूदित पाठ

यह गंध उन दीवारों से रिसती रहती थी, जिन्हें अंग्रेजों ने दो सौ वर्षों की अपनी मौजूदगी के दौरान खड़ा किया था । ये दीवारें सिर्फ लाल-बैंगनी बोगनवेलिया से ढंकी ईंटों की ही नहीं थीं जिनके भीतर उनके विशाल बंगले बने थे, बल्कि ये दीवारें सख्त तहजीबों और सामाजिक दूरियों की भी थीं जिन्हें साम्राज्यवादी शासकों ने भारत और भारतीयों को परे रखने के लिए खड़ा किया था । (पृ-22)

अंग्रेजों के द्वारा खड़ी की गयी ये ऊंची दीवार ब्रिटिश परिवारों को भारतीयों से अलग करती थीं । 'बोगनवेलिया से ढंकी' ये दीवार ब्रिटिश लोगों के विलासिता से भरे संघर्षविहीन जीवन की भी प्रतीक थीं । जो भारतीयों को उनकी गरीबी का और ब्रिटिश परिवारों को उनका अमीरी का एहसास दिलाती थीं । अनुवादक द्वारा प्रयुक्त भाषा लेखक के प्रतीकात्मक अर्थ को व्यक्त कर पायी है ।

सुधीर कक्कड़ ने एक बड़े कैनवास पर इस उपन्यास की रचना की है । इन्होनें वातावरण में विस्तार की अपेक्षा गहराई को महत्व दिया है । जब नवीन पहली बार साबरमती आश्रम जाता है तो वहां के वातावरण का बहुत ही सूक्ष्म पर्यवेक्षण करता है । आश्रम में प्रवेश के बाद धीरे-धीरे संभले हुए क़दमों से वह बापू की कुटिया की ओर

जाता है । जब वह बापू की कुटिया में प्रवेश करता है तो देखता है कि बापू गोलाकार सफ़ेद गद्दे पर बैठे हैं और ...

मूल पाठ

In front of him was a low wooden desk with a pile of papers, a reed pen, a squat bottle of black ink and a blotting pad arranged neatly on its flat top. Otherwise, the room was largely bare. Its floor was covered with woven reed mats. An earthen pitcher of water with a big clay plate covering its moth and a glass tumbler overturned on the plate stood in one corner of the room. A spinning wheel, which had accupied a prominenet place in recent newspaper photographs, took up most of the space in another corner. Next to it lay a wicker basket containing the day's spun yarn an unused fluffy balls of cotton. (p-91)

अनूदित पाठ

उनके सामने लकड़ी की एक डेस्क भी थी जिस पर कुछ कागज़, सरकंडे की कलम, दवात और स्याहीसोख पैड रखी थी । बाकि कमरा लगभग खाली था । उसके फर्श पर चटाई बिछी हुई थी । कोने में मिटटी का एक घड़ा रखा था पानी के लिए । उस पर पकी हुई मिट्टी का एक ढक्कन रखा था और उसके ऊपर शीशे का एक गिलास उलटकर रखा था । हाल में अखबारों में जिस चरखे की कई तसवीरें छपी थी वह दुसरे कोने में खासी जगह घेरे हुए था । उसके साथ बांस की एक टोकरी रखी थी जिसमें दिन भर का काता गया सूत और रुई के गोले रखे थे जिनसे सूत काता जाता था । (पृ-76)

आश्रम में जब नवीन पहली बार आता है तो वह बापू की कुटिया में जाता है । अन्दर जाकर नवीन की दृष्टि उनके कमरे में रखी चीज़ों की और जाती है, ये चीज़ें वे थीं जो एक व्यक्ति के सादे जीवन के लिए आवश्यक होती हैं । यह दृश्य 'बापू' के

'महात्मा' बन जाने पर भी उनके सादे जीवन का प्रतीक है। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो साधारण जीवन और उच्च विचार के प्रतीक हैं। लेखक के इस विचार को अनूदित अंश में भी पूर्णत: स्थान मिला है।

शैली

शिल्प का सम्बन्ध अभिव्यक्ति से होता है। शिल्प का विभिन्न प्रकार से प्रयोग करने पर ही साहित्य की विधाओं में अभिव्यक्ति की विवधता आती है। साहित्यकार के द्वारा प्रयुक्त विविध विधियां-प्रविधियां, क्रियायें-प्रक्रियाएं उनके रचना कौशल और अभिव्यक्ति पटुता को समद्ध करते हैं। शिल्प को अलग-अलग प्रकार से प्रयोग करने पर ही रचना रुचिकर बनती है, साथ ही उसके कला-सौन्दर्य में भी वृद्धि होती है।

साहित्यिक अनुवाद में शिल्प का अनुवाद एक ऐसा साधन है जिसे पढ़कर लक्ष्यभाषा के पाठक की जिज्ञासा वैसे ही शांत होती है, जैसे कि स्रोत भाषा के पाठक की। शताब्दियों से अनुवाद के उत्तरदायित्व की भूमिका को भिन्न भाषा-भाषी लेखक निभाते आ रहे हैं। अशोक कुमार ने सुधीर कक्कड़ के अंग्रेज़ी में रचित 'मीरा एंड दी महात्मा' उपन्यास का हिन्दी भाषा में 'मीरा और महात्मा' शीर्षक से अनुवाद किया है। लेखक ने आलोच्य उपन्यास का निर्माण अंग्रेज़ी भाषा में ब्रिटिश और भारतीय पृष्ठभूमि को आधार बनाकार किया है। जिसे अशोक कुमार ने दोनों देशों के व्यक्ति, विचार, समाज और संस्कृतियों को साहित्यिक अर्थात शैलीगत और तकनीकी अर्थात भाषागत माध्यम से लक्ष्यभाषी पाठक तक संप्रेषित किया है।

'मीरा एंड दी महात्मा' एक अर्ध काल्पनिक उपन्यास है, जिसका विकास भारत के स्वतन्त्रता संघर्ष की तथ्यात्मक घटनाओं को, महात्मा और मीरा के प्रेम को, पृथ्वी की ओर मीरा के आकर्षण को, मीरा के आजीवन प्रेम को न पाने के संघर्ष को आधार बनाकर किया गया है। 'मीरा एंड दी महात्मा' में सच्ची घटनाओं और काल्पनिक दृश्यों को आधार बनाकर उसे प्रयोगधर्मी बिम्बों के माध्यम से लेखक ने शिल्प का एक अद्भुत रूप खड़ा किया है। कथा वस्तु में वास्तविकता का भ्रम उत्पन्न करने के लिए लेखक ने विविध प्रणालियाँ अपनायीं हैं। कही पर ऐतिहासिक तथ्य है, कहीं पर प्रधान पात्र (नवीन) अपनी कथा स्वयं प्रस्तुत करता है, तो कहीं अन्य पात्रों की मानसिक

उथल-पुथल को दिखाता है, कहीं पर पात्र संवादों के माध्यम से अपनी कथा स्वयं कहते हैं, कहीं पात्र बारी-बारी से अपनी कथा पाठक के सामने प्रस्तुत करते हैं, कहीं पर गौण पात्र को रखा गया है जो अपने किसी सम्बन्धी या परिचित की कथा को बड़े आत्मीय और ममस्पर्शी ढंग से कहता है, कही पर डायरी के अंश हैं, तो कही पर पूरे पत्र या पत्रों के अंश हैं ।

किसी भी प्रोक्ति, पाठ, वाक्य या शब्द का अनुवाद हो उसमें समतुल्यता का ही प्रश्न उठता है। "इसके लिए कैटफर्ड ने एक परिभाषा में समतुल्यता के सिद्धांत को यह कहकर स्पष्ट किया है कि अनुवाद में समतुल्यता तभी संभव है, जब स्रोत भाषा एवं लक्ष्यभाषा ऐसी सम्प्रेषण परक स्थितियों में समान स्तर पर जुड़ी हों, जिनका सबंध मूल रचना के भाव और शैली से हो ।"[1] इसी समतुल्यता की जांच आगे उपन्यास की शैली के अनुवाद में 'आत्म कथात्मक', चेतना प्रवाह, मनोविश्लेषणवादी, पद्यात्मकता के आधार पर की गयी है ।

<u>आत्म कथात्मक शैली</u>

आत्म कथात्मक शैली प्रथम पुरुषात्मक शैली होती है । जिसमें 'मैं' के माध्यम से कथाकार अपनी या किसी पात्र की कथा को दिखाता है । आलोच्य उपन्यास में कथाकार नवीन ने जब ब्रह्मचर्य के व्रत का उल्लंघन किया तो वह कुछ समय के लिए आश्रम से बाहर चला जाता है । जिसके बाद वह कुछ सालों तक बाहर ही रहता है और आश्रम में अपनाए गए सादे खानपान और मेहनत वाले जीवन को भूल जाता है। उदहारण के लिए

<u>मूल पाठ</u>

In my letters I confessed to Bapu that in my constitutions my taste buds

---

[1] सुरेश सिंघल : पृ-56

and literary imagination held sway and, worse, that I was not averse to accepting their sovereignty. I wrote to him that I was reluctant to return till I was free of the doubts that had begun assail me, that I needed more clarity on the goal of my journey before I could reaffirm my commitment to the ashram. My commitment to him, of course, was undying. (p-183)

अनूदित पाठ

अपने पत्र में मैंने स्वीकार किया कि मेरे स्वभाव में स्वाद और साहित्यिक कल्पनाशीलता हावी रहती है और सबसे बुरी बात यह है कि मैं उनके वर्चस्व को स्वीकारने से परहेज नहीं करता । मैंने उन्हें लिखा की मैं तब तक आश्रम नहीं लौटना चाहूँगा जब तक मैं उन संदेहों से मुक्ति नहीं पा लेता जो मुझ पर हावी होने लगे हैं, कि आश्रम की प्रतिबद्धताओं से मैं तब तक नहीं बंधना चाहूँगा जब तक मैं अपने लक्ष्य के बारे में स्पष्ट न हो लूँ । लेकिन बापू के प्रति मेरी प्रतिबद्धता अटूट है । (पृ-149)

अनूदित अंश में अशोक कुमार ने आश्रम से बाहर रहते हुए नवीन के आत्म विश्लेषण की क्षमता और वैयक्तिक चेतना को दिखाया है । इस अंश में लक्ष्यभाषी पाठक तक लेखक का सन्देश पहुँचाने में अनुवादक सफल हो पाया है ।

चेतना प्रवाह शैली

'मीरा एंड दी महात्मा' उपन्यास में ऐसे बहुत से दृश्य आये हैं जब मीरा बिना सोचे समझे अपने विचारों को सुख या दुःख को साध्य बना बहने देती है । कहीं तो उसका यह प्रवाह वाणी से व्यक्त होता है और कहीं पर उसकी शारीरिक प्रतिक्रियाएं उसे इस भाव में बहने देती हैं । उदहारण के लिए जब मीरा लन्दन में अपने माता-पिता के साथ रहती थीं, तो एक दिन उन्होंने गाँधी जी के 21 दिनों के उपवास के खत्म होने की

खबर पढ़ी और वे ख़ुशी से दौड़ती हुई रसोई घर में जाकर अपनी माँ के गले लग गयीं । एक दृश्य में नवीन ने मीरा के इस प्रवाह को दिखाया है -

मूल पाठ

She threw the newspaper down on the floor of the morning room of their Bedford Gardens house where she had just finished breakfast and rushed to the kitchen. Without uttering a word, she threw her arms around her astonished mother who was giving instructions to the cook for the special dinner (p-12)

अनूदित पाठ

बेडफोर्ड गार्डेन्स हाउस में नाश्ता ख़त्म करते हुए जब उन्होनें यह खबर अखबार में पढ़ी तो अखबार को फर्श पर चुपचाप पटककर वे रसोई घर की ओर दौड़ पड़ीं और माँ को अपनी बाहों में भर लिया । माँ रसोइये को रात में बनाये जाने वाले व्यंजनों के बारे में समझा रहीं थीं । (पृ-15)

एक 30 वर्षीय स्त्री का बच्चे की तरह भाग कर माँ के पास जाना और अपनी खुशियों को समेट न पाने के कारण उसके गले लग जाना अनूदित अंश में व्यक्त हो रहा है । जिस चेतना का प्रवाह लेखक ने दिखाया है वही अनुवादक भी दिखने में सफल रहा है ।

मूल पाठ

But my god forbids me to dance with ankle bells on my feet and with castanets in my hands. Why did he give me her name if he did not want her passion? My head understand his letters one way: he will be angry. (p-154)

अनूदित पाठ

लेकिन मेरे भगवान मुझे पैरों में घुंघरू बाँध कर नाचने और हाथों में इकतारा लेकर गाने से मना करते हैं। वे अगर नहीं चाहते थे कि मुझमें मीरा की भावनाएं जगें तो उन्होनें मुझे उनका नाम क्यों दिया ? मेरा मस्तिष्क उनकी बातों को एक तरह से समझता है। अगर मैं सब कुछ छोड़ कर उनके पास चली जाऊं तो वे नाराज़ हो जायेंगे। लेकिन मेरा ह्रदय उनकी बातों के दुसरे अर्थ लगाता है। (पृ-128)

मीरा बापू से मिलना चाहती है, उनके पास रहकर उनकी भक्ति करना चाहती है लेकिन बापू उन्हें अपने से दूर कर देते हैं। यही दुःख है जो हर बार मीरा को यह तो एहसास दिलाता है कि मीरा बाई की तरह अपने कृष्ण को प्रेम तो करती है, मगर उनकी भक्ति नहीं कर सकती। मीरा खुद को एक कारा में फंसा हुआ महसूस करती है और उसका यही दुःख उसकी चेतना में अनूदित अंश में प्रवाहित हो रहा है।

मनोविश्लेषणवादी शैली

सुधीर कक्कड़ एक मनोविश्लेषणवादी लेखक है इसलिए उनकी रचनाओं में पात्रों का मनोवैज्ञानिक चित्रण अवश्य मिलता है। 'मीरा एंड दी महात्मा' में लेखक न केवल पात्र के सामाजिक, नैतिक और क्षेत्रीय परिवेश का चित्रण करता है अपितु उसके अवचेतन मन की प्रक्रियाओं को भी चित्रित करता है। मेडलिन का चेतन मन उसे बार-बार अवचेतन मन में पलने वाले वैविध्यपूर्ण विचारों की ओर ले जाता है और वह बार-बार उससे बाहर निकलने की कोशिश करती है। 12 वर्ष की उम्र में मेडलिन के साथ जब ऐसा हुआ, उसका वर्णन मीरा ने अपनी डायरी में स्वयं किया है। इसमें मीरा ने दुनिया से अपने अलगाव के बारे में बताया है। बचपन में मीरा अक्सर निरपेक्ष वायवीय भाव से भर जाती थी और भयभीत हो उठती थी। इस भाव को अनुवादक ने इस प्रकार लिखा है -

मूलपाठ

"There were moments when something would take me away from the world in which I lived and for a while I would not know who or where I was Sometimes this dislocation would fill me with terror When I overhead of my elders to talk of stars, galaxies and infinite space between them, for instance, a cold dread would seize me as my mind desperately scampered to put images to their words would hurriedly try to think of something mundane and very ordinary– one Lucy's blue slippers which was getting frayed in the front,..." (P-62-63)

अनूदित पाठ

"अक्सर ऐसे क्षण आते रहते थे जो मुझे उस दुनिया से, जिसमें मैं रहती हूँ और उस ब्रह्मांड से, जिसमे मैंने एक स्थान घेर रखा था, मुझे काट देते थे और मैं यह नहीं जान पाती थी कि मैं कौन हूँ? यह अलगाव कभी-कभी मुझे बहुत आतंकित कर देता था । उदहारण के लिए ऐसा तब होता था जब बड़े लोगों को तारों, आकाशगंगा और उनके बीच के अनंत अन्तरिक्ष के बारे में बातें करते सुनती थी । एक ठंडी दहशत मुझे घेर लेती थी, जब उनके शब्दों को मेरा मस्तिष्क काल्पनिक छवियों में ढालने लगता । तब मैं हड़बड़ाकर बिल्कुल सांसारिक, आम बातों पर ध्यान लगाने लगती थी, जैसे यह कि लूसी की नीली चप्पलें आगे से घिस रही थी..." (पृ-54)

लेखक ने जिस प्रकार बच्चों के मन में बड़ों की बातों को सुनकर उभरने वाले डर को दिखाया है, अशोक कुमार ने भी उसे उतनी ही सफलता से लक्ष्यभाषी पाठक को संप्रेषित किया है । लेखक की ही तरह अनुवादक भी एक 12 वर्षीय मीरा के तारों और आकाशगंगा की बातों को सुनकर लगने वाले डर को लक्ष्यभाषा में अनूदित करने में

सक्षम रहा है । लेखक के जैसे ही अनुवादक भी मेडलिन के मस्तिष्क को समझने में सफल रहा है ।

फ्रायड और एडलर जैसे प्रारम्भिक मनोवैज्ञानिकों के अनुसार सृजन प्रक्रिया अचेतन मन का व्यापार है और रचनाकार साहित्य के रूप में अपने ही मन को तुष्टि प्रदान करता है । इस क्रम में फ्रायड ने लेखक की तुलना शिशुओं के साथ की है - "अब लेखक अपनी रचना को बच्चे के खेल की तरह ही लिखता है । जैसे बच्चा अपनी कल्पना को बहुत ही गंभीरता से लेता है, वैसे ही लेखक भी अपनी कल्पना को चतुराई से विभूषित कर वास्तविकता से अलग कर देता है ।" [1]

पद्यात्मक शैली

आलोच्य उपन्यास 'मीरा एंड दी महात्मा' में लेखक ने पद्य का भी समावेश किया है । उपन्यास में आने वाले **पद्यों** का अनुवाद करते हुए अनुवादक को लक्षणापरक, व्यंजनापरक और प्रतीकात्मक अर्थ पर ध्यान देना होता है । अनुवादक अशोक कुमार ने **पद्यों** का अनुवाद करते हुए विलक्षण कुशलता का परिचय दिया है साथ ही स्रोत भाषा की गेयता को लक्ष्यभाषा में भी समान प्रभावोत्पादकता दी है । जिससे कि लक्ष्यभाषी पाठक को उन गीतों के सन्देश ग्रहणीय रहे हैं । **पद्यों** के अनुवाद में समतुल्यों की अपनी विशेषता होती है ।

आश्रम में रहते हुए भी मीरा बापू के साथ अकेले समय न व्यतीत कर पाने की असमर्थता के कारण वियोग में त्रस्त रहती थी । उनकी ऐसे स्थिति को देखकर नवीन को उनके लिए मीराबाई का एकमात्र ही पद याद आ रहा था जिसे उन्होंने मीरा (मेडलिन) को हिन्दी कक्षा के दौरान सिखाया था ।

---

[1] सुरेश महेश्वरी, बालेन्दुशेखर तिवारी, " Now the writer does the same as child at play, he creates a world of fantasy which he takes very seriously that is he invests it with great deal of affect while separating sharpely from reality." पृ-193

मूल पाठ

I am driven mad with love,

No one knows my pain.

Only the wounded knows the agony of the wounded,

No one else.

Only the jeweller knows the value of the gem,

Not the one who has lost it.

O Lord, Mira's pain will only disappear

If the dark one is the healer. (p-141)

अनूदित पाठ

ऐ री मैं तो प्रेम दीवानी, मेरा दर्द न जाने कोये

घायल की गति घायल जाने,और न जाने कोये... (पृ-117)

उपर्युक्त अग्रेज़ी **पद्य** का जो अनुवाद अनुवादक ने दिया है, वह भारतीय समाज में प्रचलित है। 'मीरा एंड दी महात्मा' में लेखक ने जिस अंग्रेजी **पद्यांश** को लिखा है, उसे देखकर तो ऐसा लगता है जैसे लेखक ने ही साहित्य में प्रचलित मीरा के पदों में से ही एक अंश का अनुवाद अंग्रेजी में किया हो । इसलिए अनुवादक को भी मीरा की मनोस्थिति व्यक्त करने में कोई समस्या नहीं हुई । ब्रजभाषा में लिखा हुआ मीरा का यह पद अनुवाद की दृष्टि से सही है ।

'Only the jeweller knows the value of the gem' से आगे अनुवादक ने उपर्युक्त **पद्य** का अनुवाद नहीं किया है जिससे की मीरा का दर्द अधूरा ही रह गया । अशोक कुमार ने अनूदित पद में पाठक को यह तो बताया कि मीरा को प्रेम वियोग सता रहा है, मगर लेखक की तरह यह नहीं बताया कि मीरा का दर्द को तभी जायेगा जब अंधेरा ही उसकी दवा बनेगा । लक्ष्यभाषी पाठक तक केवल अधूरी भावना ही

संप्रेषित हो पायी है । दो पंक्तियों के माध्यम से प्राठक तक जो सन्देश पहुंचा वह अगली दो पंक्तियों के अनूदित न होने पर अधूरा रह गया है ।

दूसरा

मीरा जब रेवाड़ी में रह रही थी तो नवीन ने पत्र के द्वारा उनसे हिन्दी की पुस्तक के लिए पूछा कि वे क्या पढ़ना चाहती हैं, इस पर मीरा ने मीराबाई के भजनों की मांग की । कृष्ण से मीराबाई के वियोग के समान ही मीरा का भी गाँधी जी से वियोग हो गया था । लेखक बताता है कि मीरा ने अपने मनोवेगों से प्रभावित होकर नवीन को मीराबाई के एक गीत के अंश का अंग्रेजी में अनुवाद भेजा है ।

मूल पाठ

My eyes have faishioned

An altar of pearl tears,

And here is my sacrifice:

The body and mind

of Mira,

The servant who clings to your feet,

Through life after life,

A virginal harvest for you to reap.* (पृ-145)

अनूदित पाठ

थांने काईं कह समझाऊं म्हांरा बाल गिरधारी ।

पूर्व जनम की प्रीत हमारी अब नहिं जात निवारी ॥

सुंदर बदन जोवते सजनी प्रीत भाई छ भारी

म्हारे घरे पधारो गिरधर मंगल गावै नारी ॥

मोती चौक पुराऊँ बलहा तन मन तो पर वारी ।

म्हांरो सगपण तो सूं सांवलिया जुंग सूं नहीं विचारी ॥

मीरा कहे गोपीन के बाल्हो हम्सूं भयो ब्रहमचारी।

चरण सरण है दासी तुम्हारी पलक न कीजै न्यारी ॥ (पृ-121)

लक्ष्यभाषा में दिया गया यह अनुवाद अनूदित 'मीरा और महात्मा' में अंग्रेजी और ब्रज दोनों भाषाओं में अशोक कुमार ने दिया है। मीरा ने नवीन को लिखे पत्र में केवल अनुवाद की प्रति भेजी थी मूल भजनों की नहीं। 'My eyes have faishioned, An altar of pearl tears, And here is my sacrifice' का अनुवाद लेखक ने 'थांने काईं कह समझाऊं म्हांरा बाल गिरधारी।' 'पूर्व जनम की प्रीत हमारी अब नहिं जात निवारी...' किया है। इस अनुवाद में कहीं पर भी समतुल्यता का परिचय नहीं मिलता है। मीरा की भावना का मूल भाव कहीं छूट गया है, यहाँ पर संदर्भानुसार पर्याय नहीं मिलता है। मृदुलता, मूल निष्ठता, सौंदर्य का भी अभाव है। मूलभाषा में मीराबाई के जिस भजन का उल्लेख लेखक ने किया है वह मीरा की भावनाओं को अनूदित भजनों की भावनाओं में व्यक्त करने में सफल नहीं हुआ है। ऐसा प्रतीत होता है कि अनुवादक ने इस भजन को सम्भावना के आधार पर ही लिख दिया है। यह भजन आम हिन्दी भाषी पाठक की समझ से बाहर ही है।

<u>तीसरा</u>

रेवाड़ी से लौटने पर जब मीरा को गाँधी जी के बिगड़ते हुए स्वास्थ्य के बारे में पता चलता है तो वह उनसे मिलने के लिए आतुर हो जाती है। मगर गाँधी जी के मना करने पर प्रबल निषेध के आवेग के बीच फंसी मीरा को मीराबाई की स्वतंत्रता से इर्ष्या होती है, और वह कृष्ण भक्ति के उनके इस गीत को याद करती हैं -

<u>मूल पाठ</u>

Krishna, my lord,

Take this girl as your slave.

Loving Thee,I am set free . (p-154)

अनूदित पाठ

स्याम! मने चाकर राखो जी,

गिरधरिलाल ! चाकर राखो जी (पृ-128)

और फिर अपनी ही स्थिति को मीरा बाई के जैसा समझ कर वह दूसरा गीत गाती है।

मूल पाठ

... planted the creeper of love

Watering it silently with my tears.

Fully grown now,

It covers my home (p-154)

अनूदित पाठ

अंसुवन जल सींच सींच प्रेम बेल बोई ।

अब तो बेल फैल गई, आनंद फल होई ॥ (पृ -128)

अशोक कुमार ने मीरा के इस गीत का जो अनूदित संस्करण दिया है, वहां दोनों गीतों के समतुल्यों में तीव्रता आयी है जिसने मीरा के मनोवेगों को सात्विकता प्रदान की है 'fully grown now' का अनुवाद 'अब तो बेल फैल गयी है' जैसी पंक्ति में पाठक को मीरा की व्यग्रता के साथ पंक्तियों में आने वाली ध्वन्यात्मकता के भी दर्शन होते हैं ।

अनुवादक ने अंग्रेजी की पंक्तियों को हिन्दी भाषी समाज के लिए अनूदित करते हुए कोई असफलता नहीं दिखाई है । गीतों के सारे छंद, लय, भाव-भंगिमा को मीरा की संवेदनाओं के अनुसार रूपांतरित किया है । अनुवादक की विशिष्टता इस बिंदु पर यही है कि उन्होनें गीतों के भाव ही नहीं लय और तुक को भी पहचाना है । अंग्रेजी में ही अनूदित मीराबाई के गीतों को पहचान कर उनका सटीक स्थानांतरण भी किया है ।

अंग्रेजी में ही लिखे गए भाव को हिन्दी तो नहीं परन्तु ब्रजभाषा में हिन्दी भाषी समाज के लिए अनूदित कर हिन्दी साहित्य में और संसार में चर्चित मीराबाई के कृष्ण के प्रति प्रेम समर्पण को भी जीवित रखा है ।

स्वप्नदोष में की जाने वाली गलती के लिए बापू ने नवीन को माफ़ कर दिया था । माफ़ी मिलने के बाद भी नवीन को रात भर नींद नहीं आई, रात भर जागकर वह अपनी गलती का प्रायश्चित करता रहा । इस बीच नवीन के मन और मस्तिष्क में भर्तृहरि के वे गीत बार-बार गूंजते रहे जिसे उसने अपने संस्कृत पाठ के दौरान सीखा था । वह गीत इस प्रकार है -

मूल पाठ

My face is graven with wrinkles ,

my hair is streaked with gray,

my limbs are withered and feeble

my craving alone keeps its youth. (p-181)

अनूदित पाठ

मेरे चेहरे पर झुर्रियां भरी हैं

मेरे बाल सफ़ेद होने लगे हैं

मेरे अंग कमजोर पड़ रहे हैं

फिर भी मेरी इच्छा मुझे कमजोर रखे हुए है । (पृ-147)

इस गीत का अनुवादक ने सहज और सरल शब्दों के माध्यम से अनुवाद किया है, लेकिन ये शब्द केवल कोशगत अर्थ ही देते हैं । जिसके कारण गीत में विद्यमान रहने वाली तरलता, लयात्मकता और गेयता का अभाव लगता है । गीत की पंक्तियों में इन तत्वों का निर्वाह न होने पर भर्तृहरि के वास्तविक गीत की संप्रेषणीयता बाधित होती है । लक्ष्यभाषी पाठक के लिए यह साधारण पाठ जैसा हो गया है ।

'मीरा एंड दी महात्मा' का हिन्दी अनुवाद अशोक कुमार ने 'मीरा और महात्मा' के शीर्षक से किया है। अनुवादक ने कहीं-कहीं तो इसकी भाषा को अनूदित करते हुए पाठक को मूल जैसी संतुष्टि दी है, कहीं पर पाठक को अनुवाद पढ़ते हुए ऐसा लगता है कि वह अनूदित उपन्यास ही पढ़ रहा है। अनुवाद में कुछ शब्दों और वाक्यों की पूर्ण अर्थाभिव्यक्ति न होने से पाठक को निराशा भी हुई है। जिस प्रभावी भाषा का प्रयोग लेखक ने किया है उसे कथानक में जीवंत बनाये रखने के लिए अनुवादक ने पूरी सक्षमता का परिचय दिया है। भाषिक दृष्टि से उपन्यास के अनुवाद का मूल्य निर्धारण करते हुए अनुवादक के प्रयासों को भी सराहा जा सकता है।

उपसंहार

प्राचीन काल से चली आ रही अनुवाद की परंपरा ने न केवल ज्ञान-विज्ञान बल्कि साहित्य के क्षेत्र में भी अनपेक्षित विकास किया है। प्राचीन भारतीय साहित्य में अनुवाद की परम्परा क्रमबद्ध तो नहीं रही, लेकिन विश्व की अनेक भाषाओं में अनुवाद और रूपांतरण लगातार होते रहे हैं। सर्वप्रथम संस्कृत के प्राचीनतम अनुवाद चीनी भाषा में किये गए थे। इसके बाद भारत में अनुवाद का क्षेत्र विस्तृत होता गया। जहाँ एक ओर फ़्रांसीसी, अंग्रेज़ी, चीनी, सिंघली, जर्मन आदि भाषाओं में भारतीय साहित्य अनूदित हुआ, वहीं भारतीय भाषाओं में भी विदेशी भाषाओं के साहित्य का अबाध्य अनुवाद होता रहा।

आधुनिक काल में हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं से अनुवाद की परम्परा ईस्ट इंडिया कम्पनी के शासन काल तथा अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रचार-प्रसार से प्रारंभ होती है। अंग्रेजी से बहुत से विषयों में अनुवाद का काम होता है मगर सृजनात्मक साहित्य के अनुवाद सबसे अधिक होते हैं। इसी परम्परा को आगे बढ़ाने के लिए समय-समय पर अनेक लेखकों की लिखी गयी विधाओं को अलग-अलग अनुवादक अनूदित करते रहे हैं। इसी परम्परा में अंग्रेज़ी में सुधीर कक्कड़ द्वारा रचित उपन्यास 'मीरा एंड दी महात्मा' आता है, जिसे अनुवादक अशोक कुमार ने हिन्दी में अनूदित किया है।

मूल उपन्यास 'मीरा एंड दी महात्मा' लेखक की सर्वश्रेष्ठ रचनाओं में से एक है। इसकी कथा ब्रिटिश शासन की पृष्ठभूमि पर मीरा और महात्मा गाँधी के प्रेम को आधार बनाकर लिखी गयी है। जिसमें महात्मा गाँधी ने किसी और चीज़ को महत्व न देकर केवल देश को आज़ादी दिलाना ही जीवन का उद्देश्य बनाया है। मीरा का निश्छल प्रेम और समर्पण बापू को बार-बार अपने रास्ते से भटकाता है। आजीवन मीरा का प्रेम की तलाश में भटकना ही मानो उसकी नियति है, जो किसी भी तरह उसके

हित में नहीं होती। नवीन आजीवन भर अपने फैसलों के लिए असमंजस में ही फंसा रहता है। यह उपन्यास प्रेम और कर्तव्य के बीच के द्वंद्व को दर्शाता है।

एक ओर यह रचना देश के राष्ट्र पिता माने जाने वाले व्यक्ति के आजीवन समर्पण की कथा कहती है तो दूसरी ओर मीरा के प्रेम की। इस उपन्यास में एक ओर स्वाधीनता संग्राम है तो दूसरी ही ओर चरित्रों का अपना नीजी जीवन है। सभी पात्र स्वाधीनता संग्राम से जुड़े हैं अपने नीजी हित के लिए नहीं देश की आज़ादी के लिए। लेकिन लेखक ने इन पात्रों का इस प्रकार चित्रण किया है कि कहीं न कहीं ये सभी पात्र स्वाधीनता संग्राम को भूल अपने नीजी जीवन में ही उलझे हुए दिखाई पड़ते हैं। केवल एक पात्र महात्मा गाँधी हैं जो अपने **उद्देश्यों** से विचलित नहीं होते, बाकी सभी पात्र तो सिर्फ उनका अनुकरण ही करते हैं। जाहिर सी बात है कि वे बिना अपनी **बुद्धि** और ह्रदय का प्रयोग किये बिना ही बस उनके पीछे चलना चाहते हैं। परिणामत: थोड़े-थोड़े समय के अंतराल पर उन्हें यह एहसास होता है कि यह वह रास्ता नहीं है जिस पर उनका ह्रदय और **बुद्धि** एकजुट होकर चल सकते हैं, जैसे की नवीन और मीरा। देश में होने वाले आन्दोलन उन्हें फिर उसी मार्ग पर ले आते हैं जिसे वे पीछे छोड़ चुके हैं। पात्र एक दूसरे से दूर जाते हैं फिर पास आ जाते हैं, युवावस्था में अपने जिन स्वप्नों और विचारों को छोड़ कर आगे बढ़ते हैं 50-60 वर्ष की उम्र में खुद को वापस वहीं खड़ा हुआ पाते हैं।

अंग्रेज़ी से हिन्दी में इस उपन्यास का अनुवाद करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य था, जिसका अनुवादक ने पूरी कुशलता से पालन किया है। यह अनुवाद द्वंद्व-प्रतिद्वंद्व, स्वप्न भंग, मोहभंग को दिखाने में सफल रहा है। प्रेमपरक अनुभूतियाँ, यथार्थ-चित्रण, स्थितियों-परिस्थितियों को अनूदित उपन्यास में अनुवादक ने भी उसी तरह समाविष्ट किया है जिस तरह लेखक ने किया है। अनुवादक लेखक के सन्देश को इसकी अंतर्वस्तु

में सहजता से लाया है, जो कि हिन्दी पाठक के अंतर्मन पर मूल जैसा ही प्रभाव डालता है ।

दूसरा यह कि अनुवादक ने हिन्दी भाषा-भाषी पाठक वर्ग को ध्यान में रखकर ही आम बोलचाल के व्यावहारिक शब्दों का प्रयोग किया है - जैसे कि 'बुहारना', 'हिचकोले', 'शाश्वतता' । यह अनुवाद सांस्कृतिक और स्थानीय परिवेश से जुड़ी शब्दावली को पाठक के लिए सुग्राह्य और सहज रूप में परिभाषित नहीं करता है जैसे 'tweed jacket' और 'फरसान'। ऐसे ही कुछ अन्य शब्दों को पाद-टिप्पणी में अनुवादक ने स्पष्ट नहीं किया है । मूल उपन्यास में आने वाले भाव-बोध की लाक्षणिक और व्यंजनापरक छाया को शब्दयुग्म, वाक्यों, पदों एवं मुहावरों से अनुवादक अनूदित उपन्यास में सफलता से लाया है ।

इस उपन्यास की विशष्टिता इसकी शैली है । साहित्य की किसी भी विधा को उसकी शैली ही जीवंत बनाती है । उपन्यास में लेखक ने चरित्रों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण कर उसे विभिन्न शैलियों से अभिव्यक्त किया है । अनुवादक भी इस शैली की न केवल बाह्य संरचना तक ही सीमित रहा है, अपितु लक्ष्यभाषा की आभ्यंतर संरचना में भी इसे बुन दिया है । मूल शैली में कोई बदलाव न कर अनुवादक ने उसका लेखक की ही तरह स्वतंत्र संचालन किया है। लेखक की जिस शैली को अपना कर अनुवादक ने लक्ष्यभाषा में अनुवाद किया है उसे मनोविश्लेषण, चेतना प्रवाह, आत्मकथात्मक और पद्यात्मक शैली में विभाजित करने पर अनुवादक के प्रशंसनीय कार्य का भी बोध हुआ है ।

अनुवादक का कर्तव्य होता है लेखक की निर्दिष्ट संरचना को उसके ही अनुसार लक्ष्यभाषी पाठक तक पहुंचाना । क्योंकि यह अशोक कुमार की मूल रचना नहीं है इसलिए कुछ स्वाभाविक गलतियों का होना संभव था । कुछ कमियों के बावजूद भी अनुवादक ने व्यवस्थाबद्ध ढंग से मूल उपन्यास के हाव-भाव को लक्ष्यभाषा में उद्दीप्त

किया है । अनुवाद-प्रक्रिया में अर्थ की गहराई और रचना की संरचना अर्थात अन्तरंग नियमों की जांच कर उसे लक्ष्यभाषा में हू ब हू लाने का प्रयास किया गया है । समग्र रुप से कह सकते हैं कि अनूदित उपन्यास की गुणवत्ता इसकी संप्रेषणीयता है जिसका श्रेय अनुवादक को ही जाता है । दुसरे शब्दों में कह सकते हैं कि 'मीरा और महात्मा' में यह प्रयास प्राय: हर पृष्ठ पर देखने को मिल जाता है और क्या यही अनुवादक की सफलता नहीं कही जा सकती है ?

ग्रन्थ सूची

आधार ग्रन्थ सूची

1. Mira and the Mahatma, Sudhir Kakar, Penguin Viking Publications, New Delhi, year 2004
2. मीरा और महात्मा, सुधीर कक्कड़ (अनुवादक अशोक कुमार), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2005

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अनुवाद विज्ञान की भूमिका, कृष्ण कुमार गोस्वामी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली; प्रथम संस्करण 2008
2. अनुवाद विज्ञान सिद्धांत और अनुप्रयोग, (संपादक) डॉ. नगेन्द्र, हिन्दी माध्यम कार्यान्वन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, प्रथम संस्करण 1993
3. अनुवाद : संवेदना और सरोकार, सुरेश सिंहल, संजय प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2006
4. आधुनिक भारत 1885-1947, सुमित सरकार, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली नवीन संस्करण 2012
5. अंग्रेजी-हिन्दी कोश, फ़ादर कामिल बुल्के, काथलिक प्रेस, रांची, संशोधन एवं परिवर्द्धन दिनेश्वर प्रसाद, संस्करण 2007
6. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, प्रोफ़ेसर बिपिन चन्द्र, हिन्दी माध्यम कार्यान्वन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, पुनर्मुद्रण 2009 (मृदुला मुखर्जी, क.न.पनिकर, आदित्य मुखर्जी, सुचेता महाजन)
7. महात्मा गाँधी : चिंतन का व्यवहारिक पक्ष, एन महालिंगम
8. 'यूरोप का आधुनिक इतिहास भाग-२ 1914-1949 तक', सत्यकेतु विद्यालंकार,

सरस्वती सदन, नैनीताल, प्रथम संस्करण 1950

9. सुगम काव्यशास्त्र, डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी और डॉ. सुरेश माहेश्वरी; विकास प्रकाशन, कानपुर, वर्ष 2007
10. हिन्दी भाषा : विकास एवं व्यावहारिक प्रयोजन, डॉ. मुकेश अग्रवाल, के.एल.पचौरी प्रकाशन, गाज़ियाबाद, प्रथम संस्करण 2005
11. हिन्दी व्याकरण-प्रकाश, डॉ. महेंद्र सिंह राणा, हर्षा प्रकाशन, आगरा, प्रथम संस्करण 2002

इन्टरनेट सहायता

1. http://shabdkosh.raftaar.in/hindi-dictionary/meaning.aspx
2. http://www.wikipedia.org/
3. http://www.rediff.com/news/2005/sep/30sld1.htm